श्री युगल रहस्य माधुरी विलास

प्रथम भाग

लेखक--

Scanned by CamScanner

श्री मैथिली रमणो विजयते

श्रीमत्यै सर्वेश्वर्यै श्रीचारुशीलायै नमः

श्रीमन्मारुतनन्दनाय नमः

श्रीमते भगवते श्रीरामानन्दाचार्याय नमः

श्री सद्गुरवे नम

श्री युगल रहस्य माधुरी विलास

प्रथम भाग

लेखकः—श्रीमद्अग्रदेवाचार्य वंशावतंश

अनन्त श्री जानकी शरण जी महाराज मधुकर

तच्चरणारविन्द भ्रमर **'सीताशरण'**

प्रकाशकः—श्रीविदेह नन्दिनी शरणजी

अध्यक्ष—श्री तुलसी साहित्य प्रकाशन मण्डल

श्री रामकोट, श्री अवध धाम

तुम्हरो बिषम वियोग मोंहि अति दुसह दवारी ।
तदपि जासु निज भवन मुदित मन सब सुकुमारी ॥८१॥
पुनि बृन्दावन मांहि सुखद यह सरस सुहावन ।
रास रंग रमनीय लहोगी अति मन भावन ॥८२॥
तुम सब हो मन रमन मोंहि अतिसय सुखदाई ।
नित्य धाम सुख स्वाद लहोगी हिय हर्षाई ॥८३॥
यहि बिधि सुनि पिय बानि प्रेम रस सनी सुखदवर ।
प्रिय आयसु शिर राखि कीन पद वन्दन मुदभर ॥८४॥
मूरति मधुर रसाल सकल निज हिय पधराई ।
गोप कुमारी गईं सकल गृह अति सुख छाई ॥८५॥
पर निज मन अरु नेत्र बसाये प्रभु पद माहीं ।
निबसहिं अपने सदन हृदय में अति पछिताहीं ॥८६॥
यद्यपि प्रभु ने इनहिं बिविधि विधि से समझायो ।
दैइहों पुनि रस रास प्रवल लालच दिखलायो ॥८७॥
तदपि विरह की पीर हृदय में अधिक सतावै ।
प्रभु मूरति दृग बसे तबहुँ सन्तोष न आवै ॥८८॥
गोप कुमारी गईं जबहिं निज सदन सिधाई ।
तब रघुराज किशोर सखा सेबकन जगाई ॥८९॥
भरत लषण रिपुदलन योग माया बस सोवत ।
प्रभु दिनेश लहि जगे वन्दि पग प्रभु मुख जोवत ॥९०॥
सेवक सखा सुबन्धु सहित गज चढ़ि रघुनन्दन ।
अवधपुरी प्रस्थान किये निज जन मन रंजन ॥९१॥

आये महल मझार मातु मन मोद बढ़ायो।
करि आरति मन मुदित हर्ष सब मातन पायो ॥९२॥
भोजन मधुर रसाल स्वाद सुख सुधा सरिस अति।
जननी हर्षि पवाय प्यार कीनो निर्मल मति ॥९३॥
पुनि कह सोवहु तात कहहु अब तक सब भाई।
कहाँ रहे भरि निशा लाल मोहिं देहु बताई ॥९४॥
सुनत वचन अति मधुर प्रेम पूरित रस साने।
बोले श्री रघुवीर धीर सब भाँति सयाने ॥९५॥
मैइया हम सब बन्धु पिता की आयसु पाई।
मृगया हित बन गये जहाँ जमुना सुखदाई ॥९६॥
करि शिकार सब बन्धु सहित जमुना तट माहीं।
किये मुदित बिश्राम कष्ट पायेउ कछु नाहीं ॥९७॥
यद्यपि आई बिपिनि मध्य आँधी अधिकाई।
तदपि रावरी कृपा सकल विधि भई भलाई ॥९८॥
यहि बिधि रस वात्सल्य मगन माता हर्षाई।
मातु दुलारहिं पाय मुदित सोये रघुराई ॥९९॥
कहत सूत मुनिराज सुनहु शौनक विज्ञानी।
श्रोता सकल समाज रासलीला सुखखानी ॥१००॥

दो०-हे माँ बन में हमनि पर, आई बिपति अपार।
तदपि रावरी ही कृपा, रक्षा भई हमार ॥७॥

वात्सल्य सौशील्य अमित गुण सिन्धु रसिकवर।
चक्रवर्ति नृप सुवन भुवन भूषन सनेह घर ॥ १ ॥

लीला ललित रसाल मधुर सुचि सुधा लजावन ।
परम प्रेम रस रूप सतत सज्जन मनभावन ॥ २ ॥
जो यह लीला सुनै सदा हिय सरस बनाई ।
देवै दिव्य प्रकाश प्रीति दुख द्वन्द मिटाई ॥ ३ ॥
मन बुधि चित करि शुद्ध भावनाभरै अनपम ।
पावै परमानन्द होय अतिसय सुख रूपम ॥ ४ ॥
जे रघुवर रस रसिक तिनहिं प्रभु पद रसखानी ।
देवे अचल अदाग अमल सच विधि सुखदानी ॥ ५ ॥
जय जय राजकुमार मार सत कोटि सुमद हर ।
जय जय परम उदार रसिक चूड़ामणि छविधर ॥ ६ ॥
जयति नायिका नेह नवल नायक नवीन वय ।
जयति प्रेम परतन्त्र प्रेम ग्राहक सुशील मय ॥ ७ ॥
जयति प्रणत प्रति पाल करन हारे मन हर जय ।
जय जय नृपति किशोर मोर चित चोर सुघरजय ॥ ८ ॥
जयति कामिनी काम कला पूरक सुजान जय ।
जयति नायिका रमन रास रस खानि सजन जय ॥ ९ ॥
जय जय स्वजन सनेह सुधा साने पिय जय जय ।
जय जय परम प्रवीन प्रीति परखन जिय जय जय ॥१०॥
जयति सरस रति रमन केलि तत्पर रस बस जय ।
जय जय 'सीताशरण' अमल सुख सदन बदन जय ॥११॥

दो०-जय जय जय रसिकेशवर, रसिकन प्राण अधार ।
जय गुनशील स्वरूप निधि, मम सर्वस सुखसार ॥१॥

इति श्रीयुगल रहस्य माधुरी विलासे सीताशरण सुमति प्रकाशे गोपकन्या रामप्रकरण वर्णानाम द्वितीयोऽध्यायः पूर्णमस्तु ।

* तृतीयोऽध्यायः *

दधि दान प्रकरणम्

छन्द रोला:—

लीला ललित रसाल सतत सज्जन सुखकारी।
सुनि मन परमानन्द मगन शौनक मुनिभ्कारी ॥ १ ॥
लागी सरस समाधि प्रेम पूरति सब अंगा।
निरखत बिसद चरित्र हृदय में उठत तरंगा ॥ २ ॥
हरषि परसि पद कंज सूत से विनय सुनाई।
अहो कृपा गुन खानि कृपा करिये अधिकाई ॥ ३॥
सब बिधि पूरण काम राम पद कंज सनेही।
सियवर प्रेम पियूष सदन चिन्मय प्रभु देही ॥ ४ ॥
कीन कवन प्रिय सरस चरित आगे सुखदाई।
कहिये प्रभु बिन सुने श्रवण मन अति अकुलाई ॥ ५ ॥
सुनि तिन की बर विनय सूत मुनि परम सुजाना।
बोलत बचन बिवेक सहित रस भरित महाना ॥ ६ ॥
सुनहु परम रसखानि चरित पावन मनहारी।
कीने जो रघुराज कुँवर सज्जन सुखकारी ॥ ७ ॥
निशि भरि मातु सनेह पाय प्रमुदित रघुनन्दन।
सोये कृपा निधान राम भक्तन मन रंजन ॥ ८ ॥
बीते निशि हर्षाय परसि जननी पद कंजा।
नित्य क्रिया करि गये पिता ढिग प्रभु सुख पुंजा ॥ ९ ॥

वन्दे सहित सनेह चरण पंकज रघुराई।
लखि नृप हिय हर्षाय अंक रोपे सुख पाई ॥१०॥
नेह पगे मुख निरखि शीश करि घ्रान सुमुद भरि।
वात्सल्य रस मगन पिता बहु भाँति प्यार कर ॥११॥
रघुवर सुचि आचरण देखि सुनि पितु मन मोदा।
रहत परम सन्तुष्ट निरखि नित नवल बिनोदा ॥१२॥
जगत जनक रघुवीर सकल उर अन्तरयामी।
प्रेरक परम प्रकाश प्रेम निधि सब के स्वामी ॥१३॥
यद्यपि अज अखिलेश अमल अनवद्य अरूपा।
परम स्वतन्त्र परेश ब्रह्म विभु व्याप्य अनूपा ॥१४॥
तदपि प्रेम परतन्त्र रहत प्रेमिन सुखदाई।
कीरति विमल उदार सकल श्रुति शास्त्रन गाई ॥१५॥
गोप सुतनि को प्रवल प्रेम प्रभु को बसकारी।
तिन से पुनि हो भेंट सोचि मनमें धनुधारी ॥१६॥
पितु के हिय प्रेरणा करी ऐसी रघुराई।
जेहि से गोप कुमारि मिलैं संयोग बनाई ॥१७॥
बोले नृप हर्षाय सुनहु लालन मम बानी।
तुम सबको प्रिय प्राण सरिस अतिसय सुखदानी ॥१८॥
अहो वत्स सोइ पुत्र करै पितु की सेवकाई।
आयसु धरि निज शीश काज सब करै सिहाई ॥१९॥
यद्यपि सब गुण धाम पुत्र तुम परत दिखाई।
मम आज्ञा सर्वस्व मानि पालत सुखपाई ॥२०॥

सकल धर्म आचरण सदा पालक तुम ताता ।
अपने सुठि संकोच शील से अति सुखदाता ॥२१॥
मम आयसु पालना धर्म अपनो तुम मानत ।
परम प्रेम सम्पन्न प्रजा को सुत सम जानत ॥२२॥
तदपि पिता को धर्म पुत्र को शुभ उपदेशा ।
देवे परम सनेह सहित सब भाँति हमेशा ॥२३॥
याते शास्त्र सु गृन्थन यह मर्याद बताई ।
अर्थ योग को त्याग नहीं नर करै कदाई ॥२४॥
अर्थ त्याग जो करत होय किंन अतिसय दानी ।
पूर्ण मनोरथ होत न सुख नहिं धर्म गलानी ॥२५॥
धन अधीन सब धर्म कर्म सुख जीवन माहीं ।
जाके नहिं धन होय धर्म सपनेहुँ महँ नाहीं ॥२६॥
धन बिन धर्म न होय धर्म बिन पुण्य न होई ।
पुण्य बिना नहिं स्वर्ग मिलै जानत सब कोई ॥२७॥
याते हे प्रिय पुत्र आप सबको सुखदाई ।
धर्म बिचार समेत शुद्ध साधन समुदाई ॥२८॥
कीजै आप सनेह सहित सोइ क्रिया सुहाई ।
जाते धन अरु धर्म बढ़ै कीरति सुख छाई ॥२९॥
पर पहिले दुख सहन करै तब आनँद पावै ।
जो दुख से घबराय ताहि दारिद्र सतावै ॥३०॥
यद्यपि ऐसी नीति तदपि यह उचित न होई ।
मृदुमूरति सुकुमार बात जानत सब कोई ॥३१॥

यदि संकोच न होय कष्ट तुमको न बुझाई।
तो अवश्य कीजिये अर्थ संग्रह हर्षाई ॥३२॥
मम आज्ञा यदि चहो सुनो रघुवीर सुजाना।
परमारथ पथ प्रीति रीति सब भाँति महाना ॥३३॥
हे उदार कर्मण्य देश कौशलपुर माहीं।
बसत गोप गण अमित राज कर भेजेउ नाहीं ॥३४॥
कमल नयन तहँ जाय आप कर लै गृह आवो।
अपनी प्रजा पुनीत वाहि बिधु बदन दिखावो ॥३५॥
यद्यपि मन्त्री परम चतुर सब कुशल सुजाना।
राज काज को करत भली बिधि सकल बिधाना ॥३६॥
तदपि उचित यह आप जाय स्वयमहिं लै आवैं।
प्रजहि पुत्र सम जानि सबनि मन मोद बढ़ावैं ॥३७॥
राजकुँवर युवराज योग्य सोई कहलावै।
निज कर धारण दण्ड करहि अनुचित न कहावै ॥३८॥
जौं नृप रहे परोक्ष राज को काज बिसारै।
मन्त्रि पर सब भार छाँड़ि बिषयन मन धारै ॥३९॥
तो लागत अति दोष नृपहिं याते निज कर से।
राज काज निज भार समुझि देखै अति डरसे ॥४०॥
साधु बृत्ति किन होयँ तदपि मन्त्रिन विश्वासा।
कदा न छाँड़ै राजनृपति नय शास्त्रन भासा ॥४१॥
यहि विधि पूज्य सनेह पात्र पितु आयसु पाई।
निज मन भये प्रसन्न राजनन्दन रघुराई ॥४२॥

आज्ञा अति अनुकूल समुझि पितु पद शिरनाई ।
गोप कुमारिन केर प्रेम हिय में उमड़ाई ।४३।।
यह सहर्ष स्वीकार मुझें अस कहि रघुनन्दन ।
मन भावत भा जानि चले निज जन मनरंजन ।।४४।।
गोप कुमारी सकल प्रेम पूरति अति पावन ।
मेरो बिषम बियोग तिन्हहि अतिसय दुख दावन ।।४५।।
प्राण नहीं परित्याग करैं यह अति प्रिय बाता ।
प्रेमी मेरे बिना कलप सम पलक बिताता ।।४६।।
वे बाला रमणीय रमी मेरे सँग माहीं ।
दिव्य रसामृत पान कियो वाकी कछु नाहीं ।।४७।।
मेरो मधुर स्वरूप सरस आस्वादन करई ।
सो प्रेमी निशि दिवस मोहिं बिन धीर न धरई ।।४८।।
बने प्रेम परतन्त्र ब्रह्म सर्वेश उदारा ।
श्री कौशिल्या नेह नवल वर्धन सुकुमारा ।।४९।।
यद्यपि अज अखिलेश राज राजेश्वर मनहर ।
श्रीरघुवर सुख सदन सरस सब भाँति सुघर वर ।५०।।
तदपि अमल अति प्रेम बिबस यहि बिधि मन माहीं ।
राजकुँवर मन मगन प्रेम महिमा दिखलाहीं ।।५१।।
करि अस हृदय बिचार सकल निज सखा बुलाये ।
जेहि पथ आवहिं गोप सुता मारग रुक वाये ।।५२।।
कहा सखन से गोप सुता कोइ जान न पावै ।
मेरी आयसु बिना कोटि किन काम बतावै ।।५३।।

कर लेने को व्याज प्रीति बस बदन दिखाई।
देवन जीवन दान चहत उनको रघुराई ।।५४।।
बिन दर्शन वे जरहिं बिषम विरहानल माहीं।
आपहु के दृग तिर्नाहि लखन हित अति अकुलाहीं ।।५५।
पर यह गुप्त रहस्य नहीं काहुहि बतलायो।
नृप कुमार को वेष साज मारग रुकवायो।।५६।।
अनुज सखन सँग करत कलित क्रीड़ा मुदकारी।
मरकत मणि अति सजल मेघ तन द्युति मन हारी ।।५७।।
तीन जगह अति नम्र करन धनु सायक सोहत।
चितवनि चपल रसाल वंक भृकुटी मन मोहत ।।५८।।
अति विचित्र कमनीय रूप लखि अमित असमसर।
लजत तजत निज मान दुरत प्रगट तन समुद भर ।।५९।।
आनँद सिन्धु सनेह सदन सँग लिये गुप्त चर।
बिलसत मारग रोकि राजनन्दन उमंग भर ।।६०।।
तब तक आईं गोप सुता लखि सखन सचेता।
देहु दही अरु दूध सुकर कह प्रेम समेता ।।६१।।
भये खड़े मग रोकि कहा जाने नहिं पैइहो।
जब तक सब नागरी दही को कर नहिं दैइहो ।।६२।।
वे बोलीं हर्षाय कहो कर कैसो मागत।
हम अबला तुम राजकुँवर संकोच न लागत ।।६३।।
बोले श्री रघुवीर मोहिं पितु आज्ञा दीनी।
उचित क्रिया जो रही आय हमने सोइ कीनी ।।६४।।

अस कहि मृदु हँसि प्रेम सहित गम्भीर भाव भर।
देखत सबकी ओर लसत मुख चन्द्र सु मनहर ॥६५॥
सकल कुमारिन सखन सहित देखे रघुराई।
निज प्रिय दर्शन पाय भाव भरि मृदु मुसुकाई ॥६६॥
करि कटाक्ष कमनीय मधुर बानी रस बोरी।
सुखद परम गम्भीर सकल बोलीं कर जोरी ॥६७॥
हे रघुवंश किशोर हमहिं बड़ अचरज लागत।
यह क्या करते आप रोकि मारग कर मागत ॥६८॥
आगम निगम सुजान सन्त जो नीति बताई।
स्वर्ग भूमि पाताल माहिं सो गई समाई ॥६९॥
तीन लोक में सकल लोग वाही को मानत।
आपहु के कुल माहिं नीति सब कोई जानत ॥७०॥
तव कुल कीरति सुतिय लसत सिगरे जग माहीं।
परम्परागत सोइ चलत दूसरि तो नाहीं ॥७१॥
विनती हम सब केर आप स्वीकार करीजै।
नई नीति रघुराज आप धारण नहिं कीजै ॥७२॥
तुमरे कुल के नृपति नीति जैसी अपनाई।
तेहि मारग तुम चलहु राजनन्दन सुखदाई ॥७३॥
याते कीर्ति अपार आपकी जगमें छावै।
जो करि हो यहि भाँति लोक अपबाद बढ़ावै ॥७४॥
कहिये आपहिं कौन नृपति ऐसे कर लीना।
रोकेउ मारग चलत कहहु केहि ने कर दीना ॥७५॥

अपनी कीर्ति अदाग अमल जानि ललन घटावौ ।
चलहु वेद पथ माँहि लोक में सुख जस पावौ ॥७६॥
जैसे तव माधुरी निरखि श्री वरण सु इच्छा ।
राखत निज मन माँहि सतत तव करत प्रतिच्छा ॥७७॥
उसी भाँति यह कीर्ति कामिनी तुम्हरे लायक ।
याको कीजै अवसि वरण सुनिये रघुनायक ॥७८॥
दो ही जगत प्रसिद्ध एक श्रीपति भगवाना ।
दूजो वंश तुम्हार सुनहु लालन गुणवाना ॥७९॥
विष्णु प्रिया श्रीरमा आप कुल कीर्ति कामिनी ।
बिलसत बिमल बिनोदमयी सुचि सुभग भामिनी ॥८०॥
छाँड़ि विष्णु को एक पलक कमला नहिं जाई ।
तैसेहिं तव कुल कीर्ति अमल सिगरे जग छाई ॥८१॥
तेहि पर भी है चक्रवर्ति नृप सुवन सुहावन ।
धर्म नीति यश सकल गुणाकर अति मनभावन ॥८२॥
आप सकल नर रत्न प्रजा पालक सुखदाई ।
सकल नृपन ते श्रेष्ट आप मनहर रघुराई ॥८३॥
जैसे सिन्धु मझार रहें बहु रत्न मनोहर ।
तिमि तव कुलके नृपति आप कौस्तुभमणि छबिधर ॥८४॥
निज कुलमें अति श्रेष्ट सु कौस्तुभ मणिहु लजावन ।
त्रिभवन भषन आप सकल सज्जन मनभावन ॥८५॥
कौस्तुभ मणि एक लसत सतत श्रीपति उर माहीं ।
प्रभु त्रिभुवन श्रृंगार अपर उपमा में नाहीं ॥८६॥

हे अवधेश किशोर आप यह तो बतलाइय ।
कर किसका कैसा है किसको जनि सकुचाइय ।।८७।।
देवैं किस के लिये बिधी कैसें देने की ।
ग्रहण करेगा कौन आप जानत लेने की ।।८८।।
हे राजेन्द्र कुमार जानि हम सब यह लेवैं ।
फिर यदि होगा योग्य आप को हम सब देवैं ।।८९।।
यदि नहिं होगा उचित तो नहीं हम सब दैइहैं ।
बिन सोचे कर देइ जगत में अजस न लैइहैं ।।९०।।
फिर हे राजकुमार मुग्ध अति वयस तिहारी ।
कर लेने की सुबिधि नहीं जानत धनुधारी ।।९१।।
अतएव जे कुल बृद्ध जाइये तिनके पासा ।
कहहिं ग्रहण की भाँति पूछिये सहित हुलासा ।।९२।।
हो शिक्षित मन मुदित आइये निकट हमारे ।
हमसे लीजै बहुरि करहिं हे राजदुलारे ।।९३।।
देवैंगी हम अवसि नहीं कैसे कर दैइहैं ।
नृपकिशोर चितचोर रावरी आश पुजैइहैं ।।९४।।
कैसे कर नृप लेहिं अभी तुम जानत नाहीं ।
हम सब अवलन सँग अरे नाहक मग माहीं ।।९५।।
हम सब युवती बृन्द आप सब बालक बृन्दा ।
यहि प्रकार जनि करहु छेड़खानी सुख कन्दा ।।९६।।
तुम चंचल अति सकल सखा हम काह बखानै ।
राजकुँवर मनहरन अधिक हम सब नहि जानै ।।९७।।

यहि बिधि मारग माहि रोकि अति कोप दिखाई ।
पद पंकज में भाव मोर क्या चहत घटाई ॥९८॥
अस नहिं होय कदापि प्रेम हम सबको पावन ।
नित नित नव नव बढ़ै सतत सब बिधि मन पावन॥९९॥
बाहर ते अति प्रबल कोप मुद्रा दिखलावत ।
अन्तर में सुचि प्रेम सुधा रस धार बहावत ॥१००॥

दो०—हे जीवन धन रसिक मणि, मेरे प्राणाधार ।
तुम्हरी क्रिया कलाप यह, हमको सुख दातार ॥१॥

यह सब क्रिया कलाप आपको सुखद सुहावन ।
हम सब को सर्वदा होयगी प्रेम बढ़ावन ॥ १ ॥
याते मारग रोकि न अस हठ कीजिय प्यारे ।
करहु न अस अन्याय आप रघुवंश दुलारे ॥ २ ॥
सुनि तिनके वर बैन लोकपति सुत रघुराई ।
बोले बचन सनेह सहित अति मृदु मुसुकाई ॥ ३ ॥
सुनहु कुमारी सकल बिधाता ने जग माहीं ।
जग की रच्छा हेतु बनायो च्त्रिन काहीं ॥ ४ ॥
सब बिधि रच्छा करत नृपति सबसे दिन राती ।
प्रजा देति कर सतत भूप को नहिं सकुचाती ॥ ५ ॥
उनसे लेकर भाग नृपति कीरति श्री पावत ।
अनुचित कोइ न कहत सन्त श्रुति शास्त्र बतावत ॥ ६ ॥
अखिल भूमि के भूप पिता जी हमहिं बुलाई ।
कहा जो बेंचै दूध दही कर लावौ जाई ॥ ७ ॥

दधि को जो व्यापार करत बहु द्रव्य कमावत ।
सो क्यों देवत राज करहिं मनमें सकुचावत ॥ ८ ॥
तुम सब जो यह कहहु जाइये गोपन पासा ।
कर उनहीं से मागि लीजिये परम हुलासा ॥ ९ ॥
पितु की आज्ञा यही दही जो बेचन आवै ।
ताहीं से तुम कहेउ वही कर सकल चुकावैं ॥१०॥
अतः बिना कर लिये आज नहिं जाने दैइहौं ।
कोटि बनावो बात तहूँ मैं ना पति अइहों ॥११॥
तुम सब जो कर देहु कोष में छोड़ौं जाई ।
नतरु नगर में जान न पैइहो दिहौं फिराई ॥१२॥
यहि बिधि प्रिय रस भरे सुने प्रीतम के वयना ।
रमा रती गुण रूप तुल्य सुन्दर सुख अयना ॥१३॥
विद्युत ज्यों द्युति देह कलित कजरारे नयना ।
बोलीं गोप कुमारि सकल भरि भाव सचैना ॥१४॥
हे नृपनन्दन आप यदपि सर्वेश महाना ।
हम अवला अति अबल सबल तुम शील निधाना ॥१५॥
फिर भी हे मन हरन भाग यहि भाँति न पैइहो ।
नाहक मारग रोकि वृथा हम सबहिं सतैइहो ॥१६॥
याते हे सुख भवन अगर निश्चय कर लैइहो ।
तो मम गोष्ठ पधारि आप सब बिधि सुखपैइहो ॥१७॥
जे तो गोप समाज सकल पद पूजन करिहै ।
राजसुवन छबि देखि परम आनँद उर भरिहै ॥१८॥

तिनसे लै कर आप हर्षि अपनी रजधानी ।
अइहो चिन्तन करत जाहि मुनि वर विज्ञानी ॥१९॥
इस प्रकार अति प्रेम भरी सुनि तिनकी बानी ।
मुदित प्रशंसा कीन सबनि की सारँग पानी ॥२०॥
उन सबको लै साथ राजनन्दन बृज आये ।
लखि मूरति रसमयी सकल गोपन सुख पाये ॥२१॥
निज औषधी सदृश्य पाय रस मूर्ति कुँवर को ।
अभय प्रेम रस मगन गईं गृह लै छबिघर को ॥२२॥
उनकी दशा प्रशंसनीय पावन लागत अस ।
प्रेम गंग जनु प्रगट भई बहु रूप धारि जस ॥२३॥

❀ गोप सुता परिग्रहण प्रकरणम् ❀

उधर रहे जो गोप निरखि प्रभु छबि अनुरागे ।
पूजन करि बहु भाँति परम प्रेमामृत पागे ॥२४॥
बद्धाञ्जलि सब कहत आज बड़ भाग्य हमारे ।
मम सर्वस नृप सुवन कृपा करि भवन पधारे ॥२५॥
अतः सदन सब बस्तु आपकी यह रघुराई ।
नाहीं तुमहिं अदेय सकल लीजै अपनाई ॥२६॥
गोप मण्डली सकल याहि निज सेवक मानै ।
हम सबकी सब बस्तु आपनी ही कर जानै ॥२७॥
हम पाँवर दै सकत काह तुमको रघुनन्दन ।
दशों दिशा तव बसीभूत हे जन मन रंजन ॥२८॥

तव नहिं तुमहिं अदेय कछू सुनिये मनभावन।
कीरति बिमल विचित्र बिसद बिलसति अतिपावन ॥२६॥
करि स्तुति यहि भाँति सकल गोपन हर्षाई।
कियो प्रणाम सप्रेम चरण पर शीश झुकाई ॥३०॥
अब तक कर नहिं दियो क्षमा अपराध कराई।
गुप्त वार्ता एक बहुरि रघुवरहिं सुनाई ॥३१॥
बोले हे रघुवीर शत्रु मेरो कोइ नाहीं।
तदपि उपद्रव भयो महाँ मेरे गृह माहीं ॥३२॥
व्याघ्र सिंह बाराह आदि हिंसक पशु जेते।
आय गाँव में करहिं उपद्रव ये सब तेते ॥३३॥
प्रवल बवण्डर अग्नि कोप यह दैवी माया।
बहुत भाँति से राजकुँवर हम सबहिं सताया ॥३४॥
जब अति व्याकुल भये गये उत्तम द्विज पासा।
यामें कारण कवन बतावहु लखि निज दासा ॥३५॥
कहेउ विप्र समुझाय आप निर्भय बन माहीं।
घास चरावत जात पशुन मन होत तहाँहीं ॥३६॥
श्री शिव शंकर प्रिया जगत जननी जगदम्बा।
जग सृजि पालन करत देत सबको अवलम्बा ॥३७॥
तिनको वन रमनीय परम पावन सुखदाई।
ताकी सुन्दर दूब रात्रि में लीन चराई ॥३८॥
प्राण प्रिया अपमान जानि शिव क्रोध बढ़ायो।
नाम निकुम्भ महान प्रवल गण पास बुलायो ॥३६॥

वाको आज्ञा दई बहुत गण साथ लिवाई।
गोपन पीड़न देहु जाहिं अभिमान भुलाई ॥४०॥
तेहि ने ही बहु वायु वेग बृज मांहि चलायो।
व्याघ्र भये भयभीत तबहुँ सन्तोष न पायो ॥४१॥
स्वामी को अपमान समुझि अति क्रोध बढ़ाई।
तुम सबको दुख दियो उपद्रव अमित मचाई ॥४२॥
अब यदि चाहो शान्ति शिवा शिव पूजहु जाई।
सुनि हम कियो प्रणाम कीन पूजा हर्षाई ॥४३॥
तब शिव भये प्रसन्न उपद्रव बन्द कराई।
नन्दीश्वर से एक प्रवल आज्ञा पठवाई ॥४४॥
जो मोहिं चहत प्रसन्न करन सर्वदा भलाई।
तो मम आज्ञा प्रवल जाय यह देहु सुनाई ॥४५॥
परब्रह्म परमेश अकथ अज अगुन अगोचर।
मन बानी बुधि पार सार सर्वज्ञ मधुर तर ॥४६॥
परमानन्द प्रकाश पुन्ज प्रतिभा प्रतिकाशक।
अमल अखण्ड अनन्त अचल सब विश्व विकाशक ॥४७॥
अखिलेश्वर सर्वेश सुअवतारन अवतारी।
नाम राम सुख धाम प्रगट रघुवंश मझारी ॥४८॥
प्रथमहिं देवन कीन महाँ स्तुति दुख पाई।
सुनि सब की वर विनय प्रगट भै श्री रघुराई ॥४९॥
अखिल लोक अभिराम सबहिं कल्यान प्रदायक।
राम नाम जग विदित सदा समरथ सब लायक ॥५०॥

श्री साकेत मझार नृपति श्री चक्रवर्ति घर ।
प्रगट भये रस प्रेम मूर्ति रघुवर प्रमोद कर ॥५१॥
अतः जाय तुम सकल सु कन्या रत्न चढ़ाई ।
पूजौ चरण सरोज हृदय में अति सुख पाई ॥५२॥
तव कन्या स्वीकार करैं यदि श्री रघुवीरा ।
मिटिहै तुरत उपाधि सकल जनि होहु अधीरा ॥५२॥
एकै प्रवल उपाय अन्य तुम सब को नाहीं ।
याते निज निज सुता देहु रघुवर कर माहीं ॥५३॥
पुनि न कबहुँ अस करेउ करी पीछे जस करनी ।
जिमि गँमार सब करहिं बिपति परिहै पुनि भरनी ॥५४॥
निज निज पशु गृह द्वार पुत्र परिवार सचेता ।
रघुनन्दन की कृपा रहो आनन्द समेता ॥५५॥
राम नाम अभिराम महाँ मंगल को मंगल ।
सुमिरत सतत सनेह सहित नहिं होत अमंगल ॥५६॥
रघुवर सब कल्याण काहि कल्याण प्रदायक ।
परम उदार समर्थ राजनन्दन सब लायक ॥५७॥
च्छमा दया निधि सतत सकल जीवन हितकारी ।
दया बिबस ही प्रगट भये रघुवंश मझारी ॥५८॥
दानी परम समर्थ रहत सर्वदा स्वतन्त्रा ।
जग रच्छक रघुवीर होत प्रेमिन परतन्त्रा ॥५९॥
अशिव अमंगल हरन सुनी जब शिव की बानी ।
तब हम सब भै मुदित गई मन केर गलानी ॥६०॥

तब से हे रघुराज सदा हम अवसर हेरत ।
पर गृह को जंजाल महाँ माया अति घेरत ॥६१॥
आज करी अति कृपा हमनि पर हे रघुनन्दन ।
आये हमरे सदन सदा तुम जन मन रंजन ॥६२॥
हम सब के गृह माहिं विपुल बाला हैं रघुवर ।
हे नृपनन्दन आप करैं स्वीकार हर्षि उर ॥६३॥
करत समर्पण प्रेम सहित हम सब तुम काहीं ।
यासे होयं प्रसन्न शम्भु आपहु सुख लहहीं ॥६४॥
हे महाराज कुमार नाथ पद पंकज दासी ।
हों इनके बड़ भाग्य आप सब विधि सुखदासी ॥६५॥
ये सब परम पवित्र प्रेम पूरित पथ गामिनि ।
आप सरिस पति पाय होयँ अतिसय बड़ भागिनि ॥६६॥
हे नरदेव कुमार हमहुँ सब जग जस पैइहैं ।
इन को सुठि सम्बन्ध पाय निज भाग्य सरैइहैं ॥६७॥
सकल लोक में पूजनीय जस गावहिं तेते ।
सुर नर मुनि गन्धर्ब वेद बुध वरणहिं जेते ॥६८॥
कहिहैं गोप सुजान परम सबही बिधि धन्या ।
जिन रघुनन्दन काहिं समर्पी अपनी कन्या ॥६९॥
सोई अतिसय भाग्य वान सम्बन्ध तिहारो ।
जाने सहित सनेह हृदय बिच दृढ़ कर धारो ॥७०॥
प्रभु से बिन सम्बन्ध जीव सुख शान्ति न पावै ।
"सीताशरण" उपाय कोटि करि पचिमरि जावै ॥७१॥

बदत सूत सुख सहित गोप यहि विधि जब बोले ।
परम प्रेम रस सार मृदुल भरि भाव अमोले ।।७२।।
सुनि तिन की वर विनय सदय हिय श्री रघुनन्दन ।
सर्व नृपति मणिमुकुट तनय भक्तन अनुरंजन ।।७३।।
बोले बचन विशेष द्रवित हो श्री रघुराई ।
तुम्हरी भक्ति पवित्र मोहिं अति स्वबस बनाई ।।७४।।
ऐसेहिं सुता तुम्हारि सकल गुणवान पवित्रा ।
मो कहँ कियो प्रसन्न भक्ति कर शुद्ध विचित्रा ।।७५।।
हम प्रसन्न सब भांति सदा तुम सब पर रहिहैं ।
सुर नर मुनि गन्धर्व बिमल वाणी जस गइहैं ।।७६।।
और सुनहु ममबैन तत्त्वदर्शी मुनि नाथा ।
पाराशर श्री वालमीक वशिष्ठ मम गाथा ।।७७।।
अपर जन्म की कथा एक दो सबहिं सुनाई ।
लेउं और अवतार सुनहु चर्चा मन लाई ।।७८।।
तुम सब में एक गोप नाम ध्रुव परम सुजाना ।
निर्मल धर्म अचार युक्त अति ही गुणवाना ।।७९।।
उन की प्रिया पवित्र प्रेम पूरित गुण खानी ।
रस मय नाम अनूप धरा सुठि सरल सयानी ।।८०।।
स्वयं सदा सुखरूप करत आचर्ण पवित्रा ।
पालहिं धर्म महान हृदय अति सदय विचित्र ।।८१।।
मैं नहिं जानौं कहाँ बसत वे युगल सरूपा ।
पावन परम महान भक्ति रत अमल अनूपा ।।८२।।

होइहैं तिनके अंश प्रगट बृन्दावन माहीं।
नन्द यशोदा नाम अंश मम कृष्ण कहाहीं ॥८३॥
होइहैं तिनके सदन प्रगट बहु लीला करिहैं।
गोप बधुन के हृदय रास रस कौतुक भरिहैं ॥८४॥
याते तुम सब केर मनोरथ उभय प्रकारा।
पूरण करिहौं इहाँ उहाँ सुख स्वाद अपारा ॥८५॥
जैसे मैं नित बसौं प्रेम युत अवध सुधामा।
याहि न छोड़ौं कदा जाउँ नहिं दूसर ठामा ॥८६॥
अपनो अंश पठाय बिबिधि लीला बिस्तारौं।
करि खल दल बल ध्वंश सदा भू भार उतारौं ॥८७॥
मैं नित अवध मझार सखिन सँग रास बिलासा।
चाखौं तिन को प्रेम सुधा भरि हृदय हुलासा ॥८८॥
ऐसे ही तुम रहत सदा मेरे सँग माहीं।
मम लीला में करत पाठ सुख लहत अथाहीं ॥८९॥
मैं जेहि बिधि निज अंश भेजि लीला बिस्तारत।
तुमहूँ तहँ निज अंश भेजि सब काज सम्हारत ॥९०॥
जैसे मैं नित अवध बसौं पल अनत न जावौं।
तैसेहि तुम को निकट रखौं नहिं अनत पठावौं ॥९१॥
हम सब को सम्बन्ध अचल सब भाँति अनादी।
यह रहस्य अति गोप्य लहत कोइ आतमवादी ॥९२॥
येहि बिधि राजकुमार करत गोपन सँग बाता।
इतनेंहि में तहँ बृद्ध गोप बधुयें बहुव्राता ॥९३॥

गोपन दियो हटाय लाज तजि रघुवर पासा।
बोलीं बचन विशेष भक्ति रस पूर्ण हुलासा ॥६४॥
हे अवनीशकुमार कहाँ हम विपिनि निबासी।
अति दुर्लभ तव दर्श दया निधि कृपा प्रकाशी ॥६५॥
इन गौवन की कृपा लखे पद कंज तुम्हारे।
मिटे सकल दुख द्वन्द जन्म भै सुफल हमारे ॥६६॥
जो पावै नर देह नेह प्रभु पद नहिं करई।
ताको मानव जन्म व्यर्थ ही पुनि भव परई ॥६७॥
अतः सर्व दुख दोष दलन पद कंज तिहारे।
हम सेवा सब भाँति करैं बड़ भाग्य हमारे ॥६८॥
करैं भजन सर्वदा सतत आरती उतारैं।
दृष्टि दोष जनि लगै आप पर तन मन वारैं ॥६९॥
काहू दृष्टि लगाय दई हो वाहि उतारी।
लेहिं वलैइया सतत लाल तुम रहहु सुखारी ॥१००॥

दो०–हे रघुराज किशोर वर, लेकर भू अवतार।
तिमिर मई सन्सार में, करि दीनो उजियार ॥२॥

मृत्यु लोक में प्रगटि भानु सम कियो प्रकाशा।
यह कलुषित सन्सार तिमिरि मय विश्व विकाशा ॥ १ ॥
अखिल लोक त्रयपाद विभूति वेद विद कहहीं।
तिन में सुर नर नाग असुर बहु बिधि सब रहहीं ॥ २ ॥
पर तव जननी परम पूज्य कौशिल्या माता।
तेहि सम है नहिं भयो होय नहिं कोय जग जाता ॥ ३ ॥

तव माता सम भाग्य सालिनी नहिं जग जाई।
वात्सल्य रसभरे बचन यों कहत सुनाई ॥ ४ ॥
रघुनन्दन को मानि रहीं जिय माहिं जमाई।
बोलीं बचन नृपेश तनय सुनिये रघुराई ॥ ५ ॥
ये सब मम बालिका गोप बन बासिन कन्या।
तदपि रूप गुन शील खानि छबिनिधि अतिधन्या ॥ ६ ॥
ताहू पर हे राजकुमर तुम को पति पाई।
अति ही शोभित होंहि लहहिं गति भूति भलाई ॥ ७ ॥
तव कर करि कर सरिस सकल सुख सिर जन हारे।
आगम निगम पुराण भनित सुचि सन्त पुकारे ॥ ८ ॥
जे अधर्म रत भाग्य रहित नीचे कुल सम्भव।
सोनर इन सँग रमण करै यह बात असम्भव ॥ ९ ॥
यह सब रत्न स्वरूप लहैं केहि भाँति अभागो।
अतः आप को छोंड़ि अपर सँग योग न लागो ॥१०॥
यद्यपि ये सब नीच जाति हमरे गृह जाईं।
तदपि सुनहु रघुवीर रत्न रूपा दिखलाईं ॥११॥
जन्म जाति संसर्ग दोष इन को नहिं व्यापा।
सुगुण शील छबि सार व्यर्थ नहिं करौं कलापा ॥१२॥
जिमि हीरा पाषाण जन्मि अति श्रेष्ट कहावत।
सब रत्नन के मध्य माहिं अतिसय छबिपावत ॥१३॥
हे नृपनन्दन सुनहु सकल ये गोप कुमारी।
एक दिवस लखि इनहिं भयो हम को भ्रमभारी ॥१४॥

पति प्रसंग स्पर्श केर लच्छण तन माहीं।
हम सबने जब लखे बालिका हृदय लजाहीं ॥१५॥
पूछेउ तब संकोच सहिंत इन ने बतलायो।
आगम निगम पुराण जासु पावन यश गायो ॥१६।
परतर परम परेश प्रेम पूरित प्रकाश निधि।
पुरुष प्रसिद्धि प्रधान जासु दासी सब ऋधि सिधि ॥१७॥
जो निज रूप अनूप माहिं चर अचर रमावै।
कोटि कोटि कन्दर्प दर्प हर द्युति तन छावै ॥१८॥
परम प्रेम रस रूप अमल अनवद्य अनादी।
सुख सुषमा आगार लखहिं परमारथ वादी ॥१९॥
मन बानी गोतीत भाव वल्लभ बिनोद कर।
छमा दया सौन्दर्य पूर्ण मृदु चित सनेह घर ॥२०॥
स्वप्न माहिं स्पर्श कियो वाने हम सबको।
अन्य संग नहिं भयो सत्य बतलायो तुम को ॥२१॥
सुनि इन के बर बैन लह्यो हम सब सुख भारी।
जान्यो तुम अपनाय लईं सब गोप कुमारी ॥२२॥
अंग संग सुख दियो सबहिं रस सिन्धु डुबायो।
रमि रमाय सँग माहिं प्रेम रस स्वाद करायो ॥२३॥
यह तव चरण सरोज अमल सम्बन्ध सुहावन।
हम सब को अति सुखद भयो सब को मन भावन ॥२४॥
यहि सम अपर न लाभ अहै त्रिभुवन में कोई।
प्रभु प्रद में सम्बन्ध दियो हम को सुख सोई ॥२५॥

ऐसो लाभ महान मोहिं तजि अन्य न पायो।
हम सब को अति भाग्य उदय भो जिय ठहरायो ॥२६॥
गुण ग्राही गुण ग्रहण करैं कुल जाति न देखत।
जाके होवैं उदय भाग सोइ प्रभु पद पेखत ॥२७॥
अहो परम सुकुमार सुनहु हे चक्रवर्ति सुत।
सुचि सुजान सुख सदन मदन मन हरन नेह युत ॥२८॥
यद्यपि ये सब प्रगट भईं गोपन गृह माहीं।
तव पद पंकज प्रेम अमल दूसर चित नाहीं ॥२९॥
प्रभु गुणज्ञ गुण ग्रहण करैं नहिं जाति निहारैं।
यह कारज तव योग्य कियो भल सकुच न धारैं ॥३०॥
इनके कुल को दोष आप मनमें नहिं लाये।
याते हे रघुराज आप अतिसय मोहिं भाये ॥३१॥
हे दाशरथे यदपि अहैं ये सब तव दासी।
करी कृपा कमनीय कृपानिधि सब सुखरासी ॥३२॥
तदपि सकल निधि प्राप्त लोक में जो कोइ होई।
पर इन सम सुख स्वाद कदा नहिं पावै कोई ॥३३॥
करि साधन बहु भाँति जगत में सिद्ध कहावैं।
इनकी पद रज हेत सतत सोऊ ललचावैं ॥३४॥
अखिल लोक में परम सोभनीया छबिखानी।
परम प्रशंसा पात्र सदा तव पद रति दानी ॥३५॥
इमि अचिन्त्य श्रीमान परम करुणा गुण सागर।
परम उदार कृपालु सरल मति रूप उजागर ॥३६॥

पूजित गोपिन मध्य भये कन्या अपनाईं ।
स्वजन सरिस भरि भाव सकल प्रभु ने समझाईं ॥३७॥
नवल पालकिन मध्य सकल ललना सुकुमारी ।
गोप कुमारीं नेह भरीं प्रभु संग पधारी ॥३८॥
माता पिता वियोग महाँ उर पीर बढ़ाई ।
रुदन करैं सब बाल दृगन जल धार बहाई ॥३९॥
निज आश्रित सुख दानि सरस सब भाँति सुघर वर ।
दायक निज सारूप्य सजे अँग बसन भव्य तर ॥४०॥
भूषण ललित अपार हार मणि गण बहु धारे ।
चले चतुर चितचोर चपल चख चितवन हारे ॥४१॥
आये अवध मझार राजनन्दन हर्षाई ।
नायक मणि रघुवीर धीर आनन्द समाई ॥४२॥
जगत रमयिता राम सबहिं अह्लाद प्रदायक ।
चन्द्र सरिस समनीय शोक सब विधि सब लायक ॥४३॥
जाके सम नहिं अपर राम सम राम सुजाना ।
प्रीति रीति सुख स्वाद सिन्धु पूरण भगवाना ॥४४॥
माता पिता प्रमोद मगन लखि गोप कुमारी ।
अतिसय भये प्रसन्न बहुरि अस गिरा उचारी ॥४५॥
हे रघुवर सुख सदन विश्वकर्मा बुलवाई ।
मनिमय महल अनूप अमल दीजै बनवाई ॥४६॥
जिनमें ये सब गोप सुता सुख सहित बिराजैं ।
दासी दास अनेक सौज सेवा में साजैं ॥४७॥

पितु की आयसु पाय विश्व कर्महिं बुलवायो ।
रघुनन्दन हर्षाय ताहि ऐसे समझायो ॥४८॥
बिरचौ महल अनेक स्वर्ण मणि रत्न खचित वर ।
सुन्दर सब बिधि सुखद मनोहर अमल भव्य तर ॥४९॥
तेहि ने प्रभु रुख पाय रचे वर भवन अनेका ।
रचना अमल अमोल लसत एकन ते एका ॥५०॥
भव्य दिव्य नित नव्य सुखद सब दिन सब काला ।
तिन में कियो निवास सकल गोपन की बाला ॥५१॥
उनके संग बिलाश बिविधि बिधि नित नव होई ।
पर यह ललित रहस्य गोप्य जानत कोइ कोई ॥५२॥

❀ देव कन्यारास प्रकरणम् ❀

येहि बिधि नित नव चरित होत ग्रीष्म ऋतु आई ।
मातु पिता रघुवरहिं दीन आज्ञा हर्षाई ॥५३॥
अहो वत्स यह कठिन काल ग्रीष्म ऋतु आई ।
ऊष्णता अति प्रबल लता पादप मुरझाई ॥५४॥
सन्तानक बन जाय आप तहँ समय बितावैं ।
लोनीलता बितान मध्य बिहरत सुख पावैं ॥५५॥
लहि आयसु पद वन्दि शीघ्र गति अश्व सँवारी ।
तेहि चढ़ि चले रसेश रास रंजन मन हारी ॥५६॥
तहँ बहु देव कुमारि लता बनि बसहिं सुखारी ।
तिनहिं देन सुख चहत रची रचना धनुधारी ॥५७॥

व्याज सु ग्रीषम काल तहाँ पहुँचे रघुराई।
लखि सन्तानक बिपिन परम शोभा प्रगटाई ॥५८॥
ललित कलित कमनीय लतन के बने बिताना।
सब तरु फूले फले गये नमि भार महाना ॥५९॥
यह प्रभु नित्य बिहार सुथल सब बिधि मनभावन।
बोलत झिल्ली बिबिध राग रागिनी सुहावन ॥६०॥
ललित मालती लता चमेली चम्पा सुख कर।
फूले सुमन अपार उड़त मकरन्द सरस तर ॥६१॥
मधुर सुगन्धी छाय रही दशदिशि बन माहीं।
गुँजत मधुप समूह पियत मधु हिय हर्षाहीं ॥६२॥
कोयल कलरव करति सुनत मन आनँदकारी।
परमानन्द प्रवाह परे तहँ अवध बिहारी ॥६३॥
चलत पवन मन हरन त्रिबिध सुख कर सब भाँती।
लोनी लता सनेह सहित प्रभु अँग लपटाती ॥६४॥
तिन को सुठि स्पर्श लगै यहि विधि सुखदाई।
मनहुँ नवल नायिका रहीं अँग से लपटाई ॥६५॥
नव युवतिन के अंग संग से जो सुख होई।
लतन परसि रघुवीर लहत अनुपम सुख सोई ॥६६॥
कहत सूत यहि भाँति करत लीला रघुनन्दन।
तदपि अनिन्दित रहत सतत छविधर मन रंजन ॥६७॥
भक्त कल्प तरु सदा भाव पूरक रघुवीरा।
जन मन रंजन हेतु करत लीला मति धीरा ॥६८॥

यद्यपि स्वयं अकाम करत आतमा रमण नित।
अज अनीह अनवद्य अमल अति सरल मृदुल चित ।।६९।।
तदपि प्रीतिं परतन्त्र करत लीला सब भाँती
सरस सकल सुख स्वाद सहित नहिं कहत सिराती ।।७०।।
याते लगै न दोष कहै अनुचित नहिं कोई।
प्रभु में देखै दोष जानिये लघु मति सोई ।।७१।।
लतन केर स्पर्श सुखद लहि श्री रघुराई।
अति विस्मित मन कहत बैन कछु मृदु मुसुकाई ।।७२।।
क्या सन्तानक बिपिन केर यह लता भामिनी।
लगति सुखद स्पर्श मोहिं जनु निकर कामिनी ।।७३।।
मानो ये मम प्रिया सकल मम सुखद मनोहर।
इनहिं परिस मम हृदय मध्य अनुपम प्रमोद भर ।।७४।।
ऐसो हमने आज लखेउ पूरब में नाहीं।
यहि बिधि विविधि विचार करत रघुवर मन माहीं ।।७५।।
अन्तरिच्छ हो व्योम मध्य ब्रह्मा तब बोले।
राघव सुख कर बैन चैन प्रद अमल अमोले ।।७६।।
हे रघुवर सब नृपति मुकुट मणि चक्रवर्ति सुत।
सतचित आनँद रूप सकल गुण खानि सु अद्भुत ।।७७।।
ये नहिं बन की लता देव आत्मज कहावैं।
मेरी आज्ञा पाय लता बनि तुमहिं रमावैं ।।७८।।
तव पावन यश गान होत नित सुरपुर माहीं।
सुनि तुम्हरे गुण रूप सकल ये हिय हर्षाईं ।।७९।।

जगी प्रवल कामना आप को कान्त बनावैं ।
रमिरमाय तव संग सदा सब बिधि सुख पावैं ॥८०॥
याते इन ने कियो कठिन आराधन मेरो ।
प्रवल साधना माहिं सह्यो दुख अमित घनेरो ॥८१॥
तब हम भये प्रसन्न दियो इनको वरदाना ।
मिलिहैं तुम को कोटि काम मद हर भगवाना ॥८२॥
अब श्री अवध मझार बिपिन सन्तानक माहीं ।
लतारूप वर बिरचि बसो सन्सय कछु नाहीं ॥८३॥
नित प्रभु सुमिरण करहु रसिक चूड़ामणि रघुवर ।
गुण ग्राहीं पहिचानि भाव दैइहैं प्रमोद उर ॥८४॥
निज वर बाहु विशाल बिविध विधि करि आलिंगन ।
दिहैं अमित सुख स्वाद परसि सबके प्रिय अंगन ॥८५॥
बहु बिधि रास बिलाश रमण करिहैं तव संगा ।
दैइहैं निज सख्यता रमैइहैं अपने अंगा ॥८६॥
हे मदाद्य तव कृपा कोर जेहि पर हो जावैं ।
दिव्य पूर्ण सुख स्वाद सतत निशिबासर पावैं ॥८७॥
हे उदार अति सौम्य कान्त गुण से अब इन को ।
आलिंगन कीजिये रमाइय निज अँग सब को ॥८८॥
ये बाला रमनीय सकल रसरूप उजारी ।
तव स्वरूप अनरूप दिव्य चिन्मय बपु धारी ॥८९॥
सुचि सुठि आनँद दानि सभी नख सिख छबिधारी ।
तव प्रेमामृत पगीं सतत तव रस अधिकारी ॥९०॥

प्रभु सहचरी अनूप इनहिं स्वीकार करीजै।
रस निबास रस रमन रास रस इनको दीजै ॥९१॥
ये सब परम पपित्र करैंगी तव पद सेवा।
सब शुभ गुण सम्पन्न अदूषित साची देवा ॥९२॥
तजि तुम्हरे पद पद्म इनहिं दूसरि गति नाहीं।
याते तजि संकोच ग्रहण करिये सब काहीं ॥९३॥
कीजै कृपा प्रसाद सकल विधि इन पर रघुवर।
करहु अवसि स्वीकार आप स्वच्छन्द प्रेमघर ॥९४॥
पहिलेहिं इन पर कियो आपने कृपा प्रसादा।
तब तो इनके हृदय प्रगट भो इमि अह्लादा ॥९५॥
जापर कृपा न होय कदा सन्मुख नहिं आवै।
यह उज्वल रस रास हेत किमि चाह बढ़ावै ॥९६॥
ये तुम्हरे रस स्वाद करन हित सुर पुर त्यागी।
आईं चाहैं रास रंग अतिसय बड़ भागी ॥९७॥
याते हे रसिकेश आप इनको नहिं त्यागैं।
इन पर करि अति कृपा आप रति रस सुख पागैं ॥९८॥
देहु प्रेम रस दान आप समरत्थ्य उदारा।
कीजै इनके साथ आप अब प्रेम बिहारा ॥९९॥
तव पद प्राप्ती हेत सकल भूतल में आईं।
तुम्हरेहिं लगि रघुवीर लता बनि ये बन छाईं ॥१००॥
दो०-बोले बिधि हे रसिकवर, करि इनको स्वीकार।
रमिरमाय रस लीजिये, रसनिधि परम उदार ॥३॥

याते राजिव नैन कृपा करुणा गुण सागर।
रस स्वरूप रसिकेश नवल रसिया नव नागर ॥ १ ॥
करि इनको स्वीकार आप रस लीला कीजै।
रमिरमाय हर्षाय हर्षि सब बिधि सुख लीजै ॥ २ ॥
तुम प्रभु पूरण काम परम अभिराम मोद घर।
जनहित सुर तरु सतत सरल सब बिधि उदार तर ॥ ३ ॥
सुनि वर बानी बिमल व्योम बिधि की सुखदाई।
प्रमुदित भये रसेश कमल लोचन रघुराई ॥ ४ ॥
बिकशित नयन नवीन नेह युत नवल सु नायक।
इन सँग करौं बिहार करी इच्छा रघुनायक ॥ ५ ॥
प्रभु लीला स्वच्छन्द कबहुँ बाधक कोउ नाहीं।
सचराचर दश दिशा अन्त जहँ लगि जग माहीं ॥ ६ ॥
जगत प्रकाशक जगतनाथ जग कर्त्ता धर्त्ता।
जग पालक जगदीश अखिल जग को संघर्त्ता ॥ ७ ।
तव सन्मुख जो होन चहै वाको जग माहीं।
काल कर्म गुण दोष होत बाधक तेहि नाहीं ॥ ८ ॥
प्रभु को रुख पहिचान तुरत सब देव कुमारी।
दिव्य देह युत भई लता तजि रूप उजारी ॥ ९ ॥
भूषन बसन अनूप सकल अंगन मधि धारे।
दिव्य अलौकिक रूप ललित श्रृंगार सँवारे ॥ १० ॥
सरस सुगन्धित सुमन सजे माला उर माहीं।
नवल नायिका नेह नमित अतिसय हर्षाहीं। ११ ॥

लखि रघुवर हिय हर्ष उमगि लोचन जल छाये।
सुर अभिलषित ललाम नवल वर बेष सजाये ॥१२॥
सुख शोभा आगार देह अंगन गठाव वर।
भईं लता तजि देव सुता निरखत प्रमोद उर ॥१३॥
सकल अलंकृत अमल लसहिं अद्भुत सुकुमारी।
परम प्रीति रस पगीं परम पावन मन हारी ॥१४॥
वे सब देव कुमारि निरखि रघुवीर निकाई।
अद्भुत शोभा लखहिं मुदित मन रति रस छाई ॥१५॥
विधु बदनी वर बेष विरचि आईं प्रभु पासा।
अतिसय मोहित भईं हृदय में परम हुलासा ॥१६॥
तैसेहि पूरण काम राम लखि उन को रूपा।
भये परम आशक्त माधुरी मधुर अनूपा ॥१७॥
दोउ दिशि सुषमा अमित सरस सौन्दर्य हृदयहर।
दोउ दिशि बाढ़ेउ लोभ पगे आनन्द मोद वर ॥१८॥
पिय की शोभा लखहिं सकल चंचल दृग वारी।
कामिनि कला प्रवीन प्रीति वर्धन सुकुमारी ॥१९॥
तिन से बोले चतुर चपल चूड़ा मणि रघुवर।
रास रसिक शिर मौर नवल नायक विनोद भर ॥२०॥
तुम सब देवन सुता स्वर्ग तजि महि पर आईं।
हम नर राज कुमार हमहिं लखि क्यों हर्षाईं ॥२१॥
अमरन आज्ञा प्रवल्ल सदा नर पालन हारे।
आयु अल्प अज्ञान अमित दुख लहत अपारे ॥२२॥

अति परमित ऐश्वर्य स्वल्प गुण देव अधीना।
मानव निशि दिन रहत देव सब भाँति प्रवीना ॥२३॥
और सुनहु एक बात काम आदिक इन्द्रिय गन।
जीते अन्तः करण चर्तु अहमिति बुधि चित मन ॥२४॥
याते हे नागरी निखिल हम चहत न संगा।
सब आश्रय को छोड़ि रहत उन्मत निज रंगा ॥२५॥
करत रहत हम रमण सदा निज अन्तर माहीं।
जाको आश्रय लेहिं अहै ऐसोउ कोउ नाहीं ॥२६॥
नारी पुरुप समान भाव से हमहिं दिखाई।
दोनों एक समान भेद नहिं परत जनाई ॥२७॥
यावत प्राकृत वस्तु प्रीति काहू में नाहीं।
स्वसुख पूर्ण हम रहत सदा त्रष्णा न सताहीं ॥२८॥
याते ऐ कामिनी प्राप्ति करि सकल हमारी।
पैइहो क्या सुख स्वाद बताबहु रूप उजारी ॥२९॥
यहि बिधि सुनि प्रिय बचन मनोहर सुखद रसाला।
परम प्रेम रस पगीं उमगि बोलीं सब बाला ॥३०॥
हे अपरार्चित सकल भीति हर हे जग स्वामी।
अखिल जीव भय हरन कृपा निधि अन्तर यामी ॥३१॥
सुर गन सहित सुरेश विष्णु शित अज गणराजा।
पूजित चरण सरोज सुनहु रसिकन शिर ताजा ॥३२॥
यद्यपि हम सब लोग सर्वथा अहैं गमारी।
तदपि सुनत तब युक्ति कहौं कछु रसिक बिहारी ॥३३॥

सरस बचन प्रिय मधुर सुनत प्रेरित हम बाला।
करैं आप से विनय सुनिय हे रूप रसाला ॥३४॥
तुम एकान्त प्रिय सतत अपर जेते तन धारी।
सुर नर मुनि गन्धर्व कर्म परबस सब भारी ॥३५॥
अप्रिय लागत कबहुँ कबहुँ प्रिय लगत महाना।
एक रस कहाँ प्रियत्व बसहिं जे जीव जहाना ॥३६॥
आप अमल आनन्द सिन्धु एक रस सब काला।
सरल गुनाकर शील सिन्धु अनुपम छबि जाला ॥३७॥
सब चाहत आनन्द हृदय में हे रघुनन्दन।
याते हम सब प्राप्त भईं तुम को रस रंजन ॥३८॥
दूसर हेत महान आप सौन्दर्य उदधि वर।
रूप उदार अपार परम आकर्षण हिय हर ॥३९॥
सुन्दरता अवलोकि सकल हम देव कुमारी।
अति आकर्षित भईं सुनहु रस निधि सुख कारी ॥४०॥
आईं तुमरे पास सकल हम सावधान चित।
भूलि न आईं यहाँ सुनहु रसिकेश परम हित ॥४१॥
याते कीजै ग्रहण आप हम को रघुनन्दन।
हो तुम परम उदार सतत सब के भय भंजन ॥४२॥
अतः आप को पाय मनोरथ पूर्ण न होई।
यहि भय से भय भीत परम अब कीजै सोई ॥४३॥
जब ब्रह्मा दिक देव सकल तुम को सर्वोपरि।
मानत चरण सरोज सतत पूजत उमंग भरि ॥४४॥

तब फिर कहिये मोहिं आपही कृपा निधाना ।
तजि तव पावन पाद पद्म कहँ करौं पयाना ॥४५॥
दूसर को जग माहिं आप बिन हे मन रंजन ।
हम सब को अपनाय करै जो सब दुख भंजन ॥४६॥
और आप ने कहा स्वर्ग तजि महि क्यों आईं ।
यह तव बचन विनोद भरे याते हर्षाईं ॥४७॥
अब हम बूझत एक बात तुम देहु बताई ।
कीजै जनि संकोच बात सुनिये सुखदाई ॥४८॥
तुमरो धाम अनप अमल अनवद्य एक रस ।
नित्य नवल सुख सदन बदत वर वेद बिमल जस ॥४९॥
तेहि को तजि केहि भाँति आप रघुकुल में आये ।
क्या भूतल में आप अधिक आनान्द उठाये ॥५०॥
नित्य धाम से जानि अधिक सुख प्रभु ज्यों आये ।
सुर पुर से सुख अधिक जानि हम तव डिग आये ॥५१॥
कृपा निधान सुजान नाथ पद जे अनुरागी ।
सेवत चरण सरोज प्रेम से अति बड़ भागी ॥५२॥
उनहिं आप जहँ मिलैं वही थल स्वर्ग समाना ।
जहाँ आप नहिं मिलैं नरक से लगत महाना ॥५३॥
वाको अतिसय दुखद स्वर्ग सुख शान्ति न पावै ।
याते हम को नाथ आप को प्रश्न न भावै ॥५४॥
हम दोउ एक समान सदन निज निज तजि आये ।
याते पूरण काम आप हम सब को भाये ॥५५॥

और सुनहु यह स्वर्ग कर्म फल भोगन को थल ।
पुण्य छीण हो गिरत जीव नहिं चलत एक बल ।।५६।।
याते अचल न होय ताहु पर हे रसिकेशा ।
विरच्यो याको आप मुक्ति ईश्वर सर्वेशा ।।५७।।
जिन के मन में सदा नाथ पद प्राप्ति कामना ।
उनकी दृष्टि मझार स्वर्ग की कौन कल्पना ।।५८।।
जाके चित में एक प्रवल आशा अस लागी ।
कब निरखैं प्रभु चरण कमल ते जन बड़ भागी ।।५६।।
तिनहिं तुच्छ अति लगै स्वर्ग तव लोक सुहावन ।
अचल अमल सब भाँति सुखद साश्वत अतिपावन ।।६०।।
यहि ते हे चित चोर आप को सर्वस जानी ।
हम सब देव कुमारि बिना ही मोल बिकानी ।।६१।।
यहि बिधि नित के बैन मधुर प्रिय परम सरस तर ।
सुनि हर्षे मन हरन रूप सागर बिनोद कर ।।६२।।
चक्रवर्ति नृप तनय सकल सुषमा सुख सागर ।
बोले बचन सनेह भरे अति मृदु नव नागर ।।६३।।
ऐ प्यारी तुम सकल मोहिं अतिसय सुख दाई ।
सुनि तव बचन रसाल लहेउ मैं सुख अधिकाई ।।६४।।
अब तुम सब मिलि करहु सुखद लीला हर्षाई ।
तुम्हरी सुषमा अचल अमल कमनीय सदाई ।।६५।।
मम प्रिय कारज सतत होत अतिसय तुम को प्रिय ।
कीजै लीला मधुर महाँ रस रूप हर्षि हिय ।।६६।।

मम सुख को सुख मानि सतत आश्रित जन मेरे ।
करि लीला कमनीय मोहिं सुख देत घनेरे ॥६७॥
निज प्रिय नायक दिव्य राजनन्दन मन मोहन ।
सुनि तिन के बर बैन ऐन सुख स्वाद सुधाधन ॥६८॥
सकल सत्य संकल्प दिव्य तम सब सुकुमारी ।
प्रगटेउ सौज अनूप अमल अद्भुत सुखकारी ॥६९॥
स्वर्ण रत्न मणि जटित लसत सिंहासन मन हर ।
अमित विभाकर तेज मधुर प्रिय सुखद सुघर वर ॥७०॥
मणि मय चौकी चारु अमल अतिसय प्रिय पावन ।
ता ऊपर पधराय प्राण प्रीतम मन भावन ॥७१॥
उबटन अंग लगाय अमल प्रिय सुन्दर सुर्भित ।
सुजल मध्य स्नान कराई सखियन हर्षित ॥७२॥
मृगमद केशर सहित चारु चन्दन सुख दाई ।
लेपन पिय के कियो प्रेम युत हृदय सिहाई ॥७३॥
पुनि निज निज रुचि नवल विमल श्रृंगार सजाई ।
परम प्रेम रस पगीं पियहिं हँसि कण्ठ लगाई ॥७४॥
प्यार समेत लगाय हृदय आनँद रस पागीं ।
चाहत होन न अलग सकल अतिसय अनुरागीं ॥७५॥
यद्यपि प्रभु सामर्थ बान छूटन भी चाहत ।
तदपि प्रीति परतन्त्र बँधे छूटन नहिं पावत ॥७६॥
बहुत काल के बाद पाय पिय को सुकुकारी ।
याते तजन न चहत लहत सुख स्वाद अपारी ॥७७॥

पिय को छोड़त बहुरि मदन की व्यथा सतावै ।
यही एक भय बड़ो कण्ठ लगि चाह बढ़ावै ।।७८।।
इमि बर बाम सुभाव भरीं पिय को सुखदाई ।
सकल उमंगित हृदय लसहिं ललना समुदाई ।७९।।
कोइ ऊरू कोइ जंघ नायिका उचित रंग रँगि ।
करहिं केलि कमनीय कला कौतुक सनेह पगि ।।८०।।
कोइ मंगल मय चन्द्र सरिस नख से तन माहीं ।
करि कोइ कठिन कटाच्छ मोद भरि मृदु मुसुकाहीं ।।८१।।
कोइ करि व्यंग सु हास्य बचन रस मय सुखदाई ।
सुचि सुगन्ध मैरेय पान करि कोइ हर्षाई ।।८२।।
मुख मयंक माधुर भरीं छोड़त सुचि स्वाँसा ।
कोइ मनोज सम सुभग केश युत भरी हुलासा ।।८३।।
चिक्कन कोमल कलित मैन क्रीड़ा सुख कारी ।
मारति पिय तन माहिं प्रीति रस वर्धन हारी ।।८४।।
कोइ निज भौहं नचाय नेह मय बैन उचारै ।
कोइ रति रस आवेश ओठ में दन्त प्रहारै ।।८५।।
अति सय रस उन्मत्त दसन से अमल कपोलन ।
क्रीड़ति कोइ कामिनी हर्षि बोलति प्रिय बोलन ।।८६।।
कोइ कामिनी सनेह मगन मद मत्त सुखारी ।
मंजु मनोहर नैन सैन करि रूप उजारी ।।८७।।
मारति कठिन कटाच्छ वाण कोइ नवल नागरी ।
कोइ कोमल कुच मारि मधुर रस रूप आगरी ।८८।।

कोइ कामिनि कमनीय काम बस अति मतवारी।
प्रीतम प्रीति प्रकाश प्रकट पोषति सुकुमारी ॥८९॥
बोलति बचन रसाल मधुर प्रिय सुखद सुहावन।
कछु अत्तर मुख माँहि कछुक उचरत मन भावन ॥९०॥
यहि बिधि देव कुमारि अमित अति अमल अनूपम्।
अद्वितीय सब दोष शून्य पिय को सुख रूपम् ॥९१॥
करहिं केलि कमनीय कामनी कला प्रवीनी।
प्रीतम प्रीति प्रतीतिं पगीं पावन मति भीनी ॥९२॥
कोइ कन्या कल केलि करइ प्रीतमहिं रिझावै।
निज जंघा से मारिं मन्द हँसि भाव दिखावै ॥९३॥
इमि अगनित वर बाल बिबिधि विधि बिमल विनोदन।
भरीं प्रीति रस पगीं करहिं क्रीड़ा अनुमोदन ॥९४॥
सब के विबिधि प्रहार सहत रघुवर मन मोहन।
तदपि न काम सताय सकेउ अनुपम छबि सोहन ॥९५॥
मन इन्द्रिय सब शान्त न चंचलता उर आई।
राम रमयिता विश्व काम को देहिं तपाई ॥९६॥
कोटि कोटि कन्दर्प दर्प जाको लखि त्यागे।
केहि गिनती में देव सुता कहिये तेहि आगे ॥९७॥
राम नाम अभिराम प्रेम से जो जन जपई।
"सीताशरण" कदापि नहीं मन्मथ से तपई ॥९८॥
तब रघुवर रसिकेश तिनहिं किमि काम सतावै।
भक्ति प्रेम परतन्त्र काम कौतुक दर्शावै ॥९९॥

जाको अनुपम तेज पात कबहूँ नहि होई।
स्वसुख जासु आधीन अन्य सुख देय न कोई ॥१००॥

दो०–जो अनवद्य अनादि अज, ब्रह्म विरज वागीश।
पूर्ण काम आनन्द घन, परम तत्त्व परमीश ॥४॥

जो सुख सागर स्वयं कहहु को तेहि सुखदेवै।
निज अभिमत सुख हेत चराचर जिनको सेवै ॥ १ ॥
यद्यपि अस रघुवीर धीर समरथ सब काला।
तदपि प्रीति बस होत करत कल केलि रसाला ॥ २ ॥
भक्ति बिबस जे होत लोक में ईश कहावत।
तिन सब के शिरताज राम रघुवर श्रुति गावत ॥ ३ ॥
अतिसय कीरति बिसद सतत प्रभु की जग माहीं।
जाके सम या अधिक जगत में दूसर नाहीं ॥ ४ ॥
देव सुतनि की स्वाँस काम मिश्रत रसभूरी।
परम प्रेम रस भरी पवन पावन सुचि रूरी ॥ ५ ॥
लागत पिय के अंग माहिं तन शुष्क बनाये।
सखिन सुगन्धित अंग राग लेपन सुख पाये ॥ ६ ॥
ते समझीं पिय काम युद्ध में अतिश्रम पायो।
याते नाना भाँति अंग लेपन कर वायो ॥ ७ ॥
जब सब के प्रिय अंग परस सुख प्रीतम पाये।
तब उन के अँग संग करन की चाह बढ़ाये ॥ ८ ॥
करौं मनोरथ पूर्ण सबनि को अति सुख देवौं।
रमि रमाय सब भाँति सकल बिधि निज करि लेवौं ॥ ९ ॥

यहि बिधि हृदय बिचारि भये प्रमुदित रघुराई ।
मुख प्रसन्न चितचाव चपल चितवनि सुखदाई ॥१०॥
निरखत चोखे चरवनि चतुर चित लेत चुराई ।
बोलत मधुर रसाल बैन अति मृदु मुसुकाई ॥११॥
चन्दन कुण्ड समीप गये सँग देव कुमारी ।
ता मधि कियो प्रबेश प्रेम पूरित धनुधारी ॥१२॥
हरिचन्दनोदक कुण्ड माहिं करि विपुल बिहारा ।
दियो सबहिं सुखस्वाद अमित बिधि नृपति कुमारा ॥१३॥
भूषन बसन सुकेश पुष्प माला तहँ बिखरे ।
बहुत काल के बाद कुण्ड के बाहर निकरे ॥१४॥
सब को स्वकर निकारि भाव भरि अवध बिहारी ।
करत केलि कमनीय कला कौतुक बिस्तारी ॥१५॥
मिथ्या सपथ धराय करत बहु हास बिलाशा ।
हँसत हँसावत करत सबनि उर प्रेम प्रकाशा ॥१६॥
चन्दन जल से सींचि सखी जब व्याकुल करहीं ।
तिन को दै निज सपथ मुक्त हो हिय सुखभरहीं ॥१७॥
केहु सखि को कटि बसन खुलेउ वाको कर धारी ।
जल से बाहर लाय निरखि अँग हँसत सुखारी ॥१८॥
पुनि निज सपथ दिवाय तहाँ रोकत हर्षाई ।
यहि बिधि बिपुल बिनोद करत प्रमुदित रघुराई ॥१९॥
देत सबहिं सुख स्वाद हर्षि सब को हर्षावत ।
परसत अति मृदु अंग संग करि रमत रमावत ॥२०॥

लीला ललित दिखाय सखिन को रस बस कीनो।
रघुनन्दन रसिकेश सबहिं रति रस सुख दीनो ॥२१॥
सब को कन्ठ लगाय लगे तिन के उर रघुवर।
परम उदार कृपालु रसिक चूड़ा मणि छबिधर ॥२२॥
किन्तु परम सामर्थवान ऐश्वर्य न त्यागो।
दियो सकल सुख मोहिं सखिन ऐसो जिय लागो ॥२३॥
पर रघुनन्दन रहे तबहुँ अति इन्द्रिय जीता।
किंचित नहीं बिकार सदा प्रभु गुन गोतीता ॥२४॥
प्राकृत नायक सरिस सखिन सँग सरस बिहारा।
कीनो अमित प्रकार दियो सुख स्वाद अपारा ॥२५॥
ऐसेउ करतब करत न किंचित भयेउ बिकारा।
येही प्रभु ब्रह्मत्त्व यदपि सौन्दर्य अपारा ॥२६॥
प्राकृत नायक निरखि नवल नागरी नवीनी।
रूप वती गुणवती मनोहर रति रस भीनी ॥२७॥
परसत कोमल अंग तुरत तन होत बिकारा।
कछु छन लहि सुख स्वाद बहुरि श्रम शोक अपारा ॥२८॥
पर राघव चित चोर चतुर सब को सुख दीना।
हँसि हँसि कण्ठ लगाल लगे हिय रस बस कीना ॥२९॥
कियो बिबिध बिध प्यार सबहिं सबको मन भायो।
पायो सब को प्यार मोद उर माहिं बढ़ायो ॥३०॥
ऐसो परम उदार रूप गुन शील प्रेम घर।
नाहिन "सीताशरण" अपर कोऊ नर सुर वर ॥३१॥

तब वे सब सुन्दरी निरखि चातुरी चकित चित ।
करहिं विनय कर जोरि जयति सर्वज्ञ परम हित ॥३२॥
जब प्रीतम जल सींचि सबहिं अति बिथकित कीनो ।
करि क्रीड़ा कमनीय सबहिं अति आनँद दीनो ॥३३॥
बिधु बदनी वर बाल बिमल वर बचन उचारे ।
अहो चतुर चितचोर दिव्य दर्शन सुकुमारे ॥३४॥
हे जीवन धन प्राण नाथ अब क्षमा करीजै ।
हे रसिकेश्वर हृदय हार अब आनँद लीजै ॥३५॥
हम सब ने जल सींचि प्रथम प्रभु को श्रम दीनो ।
क्या प्राणेश्वर सोइ आप ने बदलो लीनो ॥३६॥
हम अबला सब अबल सबल सब बिधि सुख सागर ।
सब बिधि पूरण काम शत्रु मद हर नव नागर ॥३७॥
अति विथकित सब भईं क्षमा करिये रघुनन्दन ।
हम सब दासी सतत नाथ पद की मन रंजन ॥३८॥
तव सामर्थ आपर नाथ हम देखि न पावै ।
अतुल पराक्रम आप न अब हम सबहिं दिखावै ॥३९॥
बसन बिना हम सबनि अंग प्रभु को सुखदाई ।
होवें यदि हृदयेश आप देखिय हर्षाई ॥४०॥
जब हम सबने स्वपति मानि तुमको रसिकेश्वर ।
तन मन धन अरु त्वचा देह सौंपेउ सर्वेश्वर ॥४१॥
अब इस से क्या अधिक आप को सर्वस मानौ ।
करुणानिधि मनहरन तुमहिं तजि अन्ययन जानौ ॥४२॥

यह तव दर्श प्रभाव बिकीं बिन गथ सब बाला ।
याते कीजै छमा छमा मन्दिर सब काला ॥४३॥
प्रभु तजि नाहिन अपर जाहि लखि हम सुख लेवैं ।
कृपासिन्धु कमनीय सतत पद पंकज सेवैं ॥४४॥
उन मृगनैनिन केर बचन अतिसय प्रिय लागे ।
मधुर मनोहर सरस सुखद प्रेमामृत पागे ॥४५॥
भक्ति प्रेम परतन्त्र आप तिनपर न्यौछावर ।
करिक्रीड़ा अति अमल रमत रस निधि सुखसागर ॥४६॥
बसन बिना तन खुले परस्पर सुछबि निहारी ।
लज्जायुत सब देव सुतनि अस गिरा उचारी ॥४७॥
यद्यपि प्रीतम प्रेम पगीं उत्कण्ठित बामा ।
बोलीं बचन रसाल मन्द हँसि परम ललामा ॥४८॥
हे शिव अज हे विष्णु सुरेश्वर असुर महाना ।
सुनिये मेरी विनय आप सब परम सुजाना ॥४९॥
यद्यपि प्रीतम प्रेमसिन्धु सब बिधि हित मेरे ।
अनुपम नायक दिव्य सुगुण थिर अचल घनेरे ॥५०॥
यावत शुभ गुण होंहि पुरुष में सब प्रभु माहीं ।
सरल शील सौन्दर्य सरस अबगुण कोइ नाहीं ॥५१॥
ऐसेहु पिय को पाय व्यतिक्रम हम से होई ।
बनत अमित अपराध कृपा करि छमिये सोई ॥५२॥
सुनि तिन की अस विनय सकल सुर अति अनुरागे ।
सुमन बरसि हियहर्षि सराहन भाग्य सुलागे ॥५३॥

बोले तुम सब परम भाग्य शाली गुण खानी ।
सर्व श्रेष्ठ शुभ मयी सकल विधि परम सयानी ।।५४।।
सर्वेश्वर प्रभु संग करत क्रीड़ा मनहारी ।
लहत बिबिधि सुख स्वाद करत प्रीतमहिं सुखारी ।।५५।।
यहिं बिधि स्तुति करी सुरन सुनि सब सुकुमारी ।
प्रीतम सँग रस रँगी भईं हिय परम सुखारी ।।५६।।
इमि करि सुजल बिहार बिपुल बिधि सखियन संगा ।
सन्तानक बन बहुरि गये रँगि रति रस रंगा ।।५७।।
कीनो प्रथम बिहार बहुरि उन कुंजन माहीं ।
गवने राजकिशोर सखिन सँग हिय हर्षाहीं ।।५८।।
यद्यपि पूरण काम काम नाशक भव भंजन ।
तदपि सखिन सँग रमत सतत सेवक मन रंजज ।।५९।।
करतहु बिपुल बिहार कामना पूर्ति न होई ।
कर से कर धरि हँसति नवेली वाला कोई ।।६०।।
क्योंकि सखिन हिय प्रवल व्यथा मन्मथ की व्यापै ।
शान्ति न पिय अँग संग किये अधिकाधिक थापै ।।६१।।
याते परम अतृप्त बनी आशक्त अधिक तर ।
याही से रसिकेश हृदय रुचि रमन करी वर ।।६२।।
भाव वस्य हृदयेश प्रेम पूरक अखिलेशा ।
स्वयं भये आशक्त दिखावत प्रभटि परेशा ।।६३।।
उनके सुख हित प्राणनाथ प्रीतम मन रंजन ।
करत अनेक बिहार राजनन्दन महि मण्डन ।।६४।।

बढ़ेउ बिहार उछाह अमित दोउन उर माहीं।
प्रीतम प्रिया समूह करत कौतुक हर्षाहीं ॥६५॥
मन्मथ रति आबेश बिपुल बिधि क्रीड़ा करहीं।
नव नायक नायिका नवल नव नेहन भरहीं ॥६६॥
बहुरि अनेक निकुंज कुंज पुंजन पग धारे।
रमि रमाय सब सखिन दिये सुख स्वाद अपारे ॥६७॥
सखिन सहित सुकुमार श्याम सुन्दर सुख पाई।
बिलसत बिपुल बिनोद बिमल वर्षत हर्षाई ॥६८॥
प्रीतम प्राण अधार प्रियन पर प्रीति दिखाई।
करत केलि कमनीय कला कौशल दर्शाई ॥७६॥
प्रेम मदन सुख रूप प्रान वल्लभ सुषमाकर।
रमत सखिन के संग देत सुख सरस सुधाकर ॥७०॥
प्रभु को बिपुल बिहार निरखि सब कुंज सिहाने।
अतिसय शोभित भये धन्य अपने को माने ॥७१॥
तिन सुठि कुंजन मध्य सखिन की अंक शीशधर।
उनहिं स्वाद सुख देन हेत नायक सुन्दर वर ॥७२॥
कीने निजदृग बन्द मनहुँ पिय अति श्रम पाये।
सोवत प्राणअधार सखिन बहु लाड़ लड़ाये ॥७३॥
निज निज रुचि अनुसार प्यार पगि देव कुमारी।
पिय की सेवा करहिं लहहिं उर आनँद भारी ॥७४॥
कोइ सखि रति रस रँगी पिया के चरण सरोजन।
प्रमुदित सेवा करति लगावति ललित उरोजन ॥७५॥

कोइ पिय कलित कपोल परसि कर परम मोद भर।
चूमति कोइ मुख कंज माधुरी निरखि सरसतर ॥७६॥
ललित कपोल मिलाय कपोलन कोइ सुख पावै।
कोइ अति प्रेम समेत हर्षि मन हृदय लगावै ॥७७॥
कोइ चूमति कर कंज लाय दृग मोद बढ़ावै।
पद पंकज कोइ चूमि प्यार से रतिरस छावै ॥७८॥
कोइ पिय को कर पकरि हाथ से कुचपर धारै।
कोइ सखि प्रेम विभोर रूप माधुरी निहारै ॥७९॥
मदन व्यथा से व्यथित सकल नख सिख सुकुमारी।
पिय सँग करहिं बिनोद निपुल निजरुचि अनुसारी ॥८०॥
कोइ वर व्यजन सरोज करन लीने सुखपाई।
प्रीतम छवि अवलोकि रही मन मोद समाई ॥८१॥
करति मधुर तर वायु बिकी लखि नवल निकाई।
"सीताशरण" सनेह स्वाद सुख वरणि न जाई ॥८२॥
अमल कमल दल नैन नेह भरि सोवत प्यारे।
देत सबहिं अह्लाद राजनन्दन सुकुमारे ॥८३॥
मन में यह अभिलाष प्रियाँ जब मोहिं जगावैं।
तब हम जगि हर्षाय सबनि को कण्ठ लगावैं ॥८४॥
अस जिज्ञासा हृदय मध्य सोवत रघुराई।
अनन्य गोचर आप मधुर माधुरी बिछाई ॥८५॥
जब तक चेतन करति कछुक दुसरे की आशा।
तब तक कृपा निबास जात नहिं वाके पासा ॥८६॥

इन सबने सब जगत माहिं सबकी गति त्यागी ।
केवल श्री रघुवीर चरण पंकज मति लागी ॥८७॥
याही से रसिकेश राम सब बिधि सुख दीनो ।
राँचे उन के रंग अमित सुख उन से लीनो ॥८८॥
जबतक साधक सकल विश्व से मन न हटावै ।
प्रीतम कृपा निधान चरण में हटि न लगावै ॥८९॥
तब तक किन कोइ करै कोटि बिधि अमित उपाई ।
पिय पद पंकज प्रीति परम पावन न कहाई ॥९०॥
जब तक होय न प्रीति करै को भक्ति अनूपा ।
प्रेमभक्ति बिन किये मिलैं कस रघुकुल भूपा ॥९१॥
जब तक प्रभु नहिं मिलैं अमल रस यह कहँ पावै ।
करि करि कठिन कलेश कोटि विधि देह सुखावै ॥९२॥
योगी सिद्ध कहाय जगत में नाम कमावै ।
पर नहिं "सीताशरण रंचहू रति रस पावै ॥९३॥
जो यह प्रभु को प्रेम स्वाद सुख देव कुमारी ।
पावहिं पिय को मोद करहिं क्रीड़ा मनहारी ॥९४॥
यह सुख अतिसय अगम सुगम प्रभु प्रेमिन काहीं ।
प्रभु की कृपा कटाक्ष बिना कोउ पावत नाहीं ॥९५॥
जो प्रभु को सर्वस्व मानि मन बुद्धि लगावै ।
सो निश्चय जानिये अवसि उज्जल रस पावै ॥९६॥
चतुर शिरोमणि श्याम सरस सखियन सँग माहीं ।
करत विचित्र बिनोद मोद अति हिय हर्षाई ॥९७॥

आप सरिस नहिं चतुर जगत में अपर दिखाई।
यहि बिधि लीला करत रहत रसमय सुखदाई ॥९८॥
पर तबहूँ रसिकेश राम अच्युत कह लावत।
अनुभव गम्य सुजान निगम अति अगम बतावत ॥९९॥
निज निज रुचि अनुसार करैं लीला सुकुमारी।
परसि प्रेम बस गात जात तन सुरति बिसारी ॥१००॥

दो०–सोचत कोइ एक नागरी, प्रीतम करुणागार।
हम सब पर करि अतिकृपा, दर्शावत निज प्यार ॥५॥

कोउ आली रस पगी हृदय में कीन विचारा।
कीनी प्रीतम कृपा लहेउ आनन्द अपारा ॥ १ ॥
सोवत राजकिशोर अकेले आलस माहीं।
शंका जनि मन करहिं कदा ये भय नहिं खाहीं ॥ २ ॥
याते कोई सखी अवसि पिय के सँग माहीं।
सोवै कण्ठ लगाय नाथ कहिं डर नहिं जाहीं ॥ ३ ॥
यही बहाना पाय जाय पिय के सँग सोई।
प्रीति बिबस मन मुदित सकुच लज्जा सब खोई ॥ ४ ॥
कोइ अलि परम प्रवीन प्रीति युत प्रीतम काहीं।
जन्त्र मन्त्र जपि बैठिं करति रच्छा हर्षाहीं ॥ ५ ॥
कोइ अनुराग सुहाग भरी हिय सुछबि निहारी।
तोरति त्रण हर्षाय उमगि नूतन वय वारी ॥ ६ ॥
अस्त्र सु विद्या निपुन अली कोइ मृदु मुसुकाई।
पिय की रच्छा करति हृदय नव नेह बढ़ाई ॥ ७ ॥

कोइ रच्छा स्तोत्र पढ़ै प्रेमामृत पागी।
प्रीतम प्रीति प्रकाश करन हारी बड़ भागी ॥८॥
कोइ अलि पिय ढिग जाय भाव भरि नृत्यन लागी।
ललित मधुर मंजीर सरस ध्वनि रति रस पागी ॥९॥
प्राणनाथ मन रमन सुखद प्रिय शब्द रसाला।
लेत नई नह तान प्रेम पूरित सो बाला ॥१०॥
कापि कृशोदरि वींण लिये स्वरमन्द मनोहर।
गान करति अति ललित सुखद मन रमन मधुर तर ॥११॥
कोइ मृगनैनी बाल मधुर मुदमय मृदंग कर।
धारे अति कमनीय वजावति परम मोद भर ॥१२॥
कोइ अलि परम प्रवीन प्रीति पगि पिय पर छाया।
करति कामिनी कलित केलि कौतुक दर्शाया ॥१३॥
तानेउ ललित बितान सभय अति परम सयानी।
मकरी कादिक कीट गिरहिं नहिं कहै सुबानी ॥१४॥
कोइ सखि प्रेम विभोर प्रान प्रीतम शिर माहीं।
सोहरावै सुख सनी अमल उपमा जग नाहीं ॥१५॥
प्रीतम बाहु विशाल विविध वर भूषन धारे।
जात जानु पर्यन्त सुखद सुन्दर छबि वारे ॥१६॥
इमि सब सुचि सुन्दरीं पगीं पिय प्रीति प्रतीती।
पियहिं लड़ावहिं लाड़ सु छबि निधि रति मद जीती ॥१७॥
सब की वर भावना भाव ग्राहक अनुभव कर।
जगे जगत पति भुजग सरिस भुज विशद मोद भर ॥१८॥

अति विशाल आयत अनप बच्छस्थल राजत।
चक्रवर्ति नृप सुवन भुवन भूषन छबि छावत ॥१९॥
कोटि मदन बिधु विमल बदन लखि निज मद त्यागत।
अहो गये हम सोय दिवस में सबहिं जनावत ॥२०॥
यह हम कियो न उचित कहत अस रघुकुल भूषन।
उठि बैठे हर्षाय मन्द हँसि हत सब दूषन ॥२१॥
यह कौशल कमनीय कीन कोशल पति नायक।
नवल नायिका नेह भाव ग्राहक रघुनायक ॥२२॥
शयन करन मिस मात्र सबहिं सुख देवन काजा।
कीनी कला निकेत शयन लीला रघुराजा ॥२३॥
जगे जानि जिय पियहिं सकल सखियाँ अनुरागीं।
जय जय रहै सदैव कहहिं सबरति रस पागीं ॥२४॥
प्रभु अभिमत सुख दानि जानि अस्तुति ते करहीं।
परमानन्द प्रमोद देवकन्या उर भरहीं ॥२५॥
भूषन बसन नवीन दिव्य नख सिख पहिराये।
मनमाना शृंगार कियो प्रीतम सुख छाये ॥२६॥
सुठि गन्धर्व कुमार राज से अधिक सुहावन।
शोभित सुषमा सदन नवल रघुवर मन भावन ॥२७॥
पिय को करि शृंगार सखिन निज नवल शृँगारा।
नख सिख भूषन बसन सजे नव सप्त अपारा ॥२८॥
निज कर पंकज धारि नवल मृदु कंज सुमन वर।
सोहहिं सखी समाज सरस सब भाँति नेह घर ॥२९॥

प्रीतम रूप निहारि सु छबि रस पियहिं नागरी।
रमणीया सब सुभग सकल शुभ गुण उजागरी ॥३०॥
पिय की सुषमा निरखि सखी गन वरणि सुनावैं।
तिमि प्रीतम मन मुदित सखिन छबि कहि सुख पावैं ॥३१॥
अरस परस शृंगार रूप दोउ को दोउ देखत।
करत प्रसंशा प्रेम मगन अनमिष छबि पेखत ॥३२॥
सचराचर चैतन्य रूप तव कृपा मनावत।
कृपा कोर को निरखि हृदय में आनँद पावत ॥३३॥
प्रभु पद सेवन सुरुचि सौज सामर्थ अपारा।
प्राप्त जाहिं जब होत करत लीला बिस्तारा ॥३४॥
वह बन बिमल विचित्र बिबिंध बिधि बरन सु तरुवर।
लता ललित मन हरन किये आवृत तरु छबि घर ॥३५॥
परम मधुर सुचि स्वाद सुधासम सुखद सुजल भर।
बने सरोवर घने खिले पंकज प्रमोद कर ॥३६॥
पूरित प्रिय मकरन्द भ्रमर गन गुंजत नीके।
सरस मधुर मन मोद देत लहि असन अमीके ॥३७॥
पीवत अलि मकरन्द मधुर तर पिय गुन गावत।
श्रवण सुखद अभिराम मनोहर रस बर्षावत ॥३८॥
मणि मय घाट अनूप अमल सब भाँति सुहावन।
निरखत नयनन नेह बढ़त अति ही मन भावन ॥३९॥
कोकिल करति कलोल कलित बानी पिय गुनगन।
बर्णति बिबिध बिनोद मोद मन्दिर आनँद घन ॥४०॥

लतन कुंज कमनीय मध्य नृत्यत मयूर गन ।
चातक चतुर चलाक चपल चितवत श्यामल घन ॥४१॥
सारस सुभग सवाम श्याम सुन्दर शुभ शोभा ।
निरखि मगन मन होत एक टक मति चित लोभा ॥४२॥
अपर बिहंग अनेक लसत तेहि कानन माहीं ।
बिहरत अति सुख पाय करत क्रीड़ा हर्षाहीं ॥४३॥
बोलहिं स्वर अति सुखद मधुर तर परम रसीले ।
सुनहिं सकल सुर सुता सहित सुख कर रिझवीले ॥४४॥
दुर्वादल रमणीय मधुर नव अंकुर सोहत ।
कंचन मणि मम भूमि रत्न खचि लखि मन मोहत ॥४५॥
कोटि काम कमनीय कान्ति हर राज कुँवर वर ।
निरखि बिपिन मन हरन प्रेम रस सदन सुभग तर ॥४६॥
सकल सखिन रुचि जानि बहुरि मन्मथ रुचि पाई ।
लीला कीन विचार परम अद्भुद सुख दाई ॥४७॥
सबहिं देन सुख स्वाद हेत मन मुदित रसिक वर ।
सखिन अंग स्पर्श करन हित अति उदार तर ॥४८॥
सकल रसनकी सार रासलीला मन हारी ।
परम प्रेमरस रूप नवल नायक सुख कारी ॥४९॥
अति पावन कमनीय केलि नागर नटवर घन ।
रघुनन्दन रस रमन मोद दायक सनेह बन ॥५०॥
ते सब सुचि सुन्दरी बंक भृकुटी कमनीया ।
काम कला कल कुशल कामिनी अति रमनीया ॥५१॥

तिनहिं करन हित सखी मुदित पिय यूथ बनाये।
कीन विभाग अनेक सकल उर चाह बढ़ाये ॥५२॥
जेहि से हो रस वृद्धि सकल परिकर सुख पावैं।
रस में सबहिं डुबाय डूबि आपहु हर्षावैं ॥५३॥
सुख सागर रसिकेश बदन बिधु सम छबि छाई।
कोटि मदन मद मथन श्याम सुन्दर रघुराई ॥५४॥
कोटि चक्र सम सुभग लसत सिंहासन मुदभर।
सुषमा शील निधान राजनन्दन उमंग उर ॥५५॥
अपने अपने समय माहिं सब सखी मुदित मन।
करहिं रास रस मधुर सरस निरखैं नटवर घन ॥५६॥
बिधि वत सकल विभाग रास प्रारम्भ भयो जब।
प्रमुदित लीला करहिं उठहिं आनँद बीची तब ॥५७॥
गान तान बन्धान वाद्य नूपुर मन हारी।
सरस मधुर गम्भीर सु ध्यनि अति आनँद कारी ॥५८॥
सुनि सुर असुर मुनीश यत्त गन्धर्व नारि नर।
पावत परमानन्द भयो मोहित सचराचर ॥५९॥
सरस रास सुख सिन्धु सरिस सखियन सुखदाई।
रमि रमाय पिय संग प्रीति रस हित उमगाई ॥६०॥
तेहि सुख को कण जाय सकल त्रिभुन रस बोरा।
अखिल चराचर जीव भये सुख स्वाद बिभोरा ॥६१॥
तब कीजै अनुमान भाग्य शाली सब परिकर।
करत मुदित रस रास रमत पिय सँग उमंग भर ॥६२॥

केतो सुख तिन लह्यो प्रेम रस कहँ तक पायो ।
जिन करि केलि कलोल सकल बिधि पियहिं रमायो ॥६३॥
निपट कीन जिन बिबस राजनन्दन रसिकेश्वर ।
पायो परमानन्द अमल रति रस अवधेश्वर ॥६४॥
अस समर्थ कवि कौन कहै उन को सुखस्वादा ।
समुझत "सीताशरण" सुखद दायक अह्लादा ॥६५॥
पर लेखनी न लिखै कहत बानी सकुचाई ।
मूक मधुर करि पान स्वाद संकेत बताई ॥६६॥
तैसेहि यह रस रास अमल अनुपम अति पावन ।
मनबानी गोतीत गोप्य तम रति रस छावन ॥६७॥
जेहि पर श्री गुरु कृपा होय सो यह रस ध्यावै ।
नतरु यत्न करि कोटि मरै पर स्वप्न न पावै । ६८॥
शंकर शुक सनकादिक देव ऋषि पवन कुमारा ।
श्री अंजनी सु अंक मोद प्रद परम उदारा ॥६९॥
छके रहत निशि दिवस एक रस जेहि रस माहीं ।
लहत अमित सुख स्वाद तृप्ति कबहूँ उर नाहीं ॥७०॥
सोई यह रस रास बिना गुरु कृपा न पावै ।
"सीताशरण" उपाय अपर न ह उर में आवै । ७१॥
चतुरंगिनी सजाय सैन मन्मथ हर्षाई ।
विश्व बिजय हित आज कठिन करनी दिखलाई ॥७२॥
नव नागरिन नितम्ब अमल अनुपम रथ पावन ।
मृदु मृदंग जय घोष सरस दुन्दुभी सुहावन ॥७३॥

प्रमदा प्रेम प्रमत्त बंक भृकुटी धनु सोहत ।
मृदु हँसि तीक्ष्ण कटाक्ष बाँण धीरन मन मोहत ।।७४।।
गान तान आनन्द भरी रस निधि सुख दाई ।
सोइ सुभटन को सिंहनाद सम परत सुनाई ।।७५।।
वींणा तार सुशब्द सरस अति मधुर मनोहर ।
धनुष प्रतंचा शब्द सरिस लागत अतिसुख कर ।।७६।।
देव कुमारिन केर कंचुकी कवच सुभग तर ।
हिय उछाह युत मन्द गमन गज दुर्मद मन हर ।।७७।।
कोटिन कामिनि काम केलि कल कुशल अनूपम ।
झूमत करिवर बृन्द सरिस रस प्रेम स्वरूपम ।।७८।।
यहि बिधि सन्मुख शत्रु समन निज विजय करन हित ।
साजेउ साधन सबल सकल मन्मथ प्रमुदित चित ।।७९।।
आज काम कमनीय रास मधि राजकुँवर कर ।
पायो परमानन्द परम अद्भुत रस मुद भर ।।८०।।
यह सुख स्वाद अनूप काम अनयत्र न पायो ।
यद्यपि प्रभु की ऋषिन काम उपमा में पायो ।।८१।।
कहुँ शृंगार समान मुनीश्वर प्रभुहिं बतावें ।
यद्यपि उपमा देत तदपि मन में सकुचावें ।।८२।।
यदपि अमित शृंगार अमित मन्मथ रमणीया ।
रघुनन्दन छबि निरखि लजत अतिसय कमनीया ।।८३।।
याही से बहु देव सुता तजि देव लोक सुख ।
रमत बिमोहित सतत जहाँ सपनेहुँ न लेश दुख ।।८४।।

भूरि भागिनी मनोरमा सब देव कुमारी।
रमत अनेकन भाँति हृदय पावत सुख भारी ॥८५॥
काम बासना प्रवल सतत अनुदित अधिकाई।
रहहिं अतृप्त सदैव यदपि रस सुखनिधि पाई ॥८६॥
निर्भय प्रेम बिभोर सतत प्रभु चरण कंज वर।
भ्रमरी ज्यों अति लुब्ध हृदय सेवत उमंग भर ॥८७॥
जब अनन्त श्रृंगार काम से छबि अधिकाई।
रघुवर तन से लसति नित्य नूतन सुखदाई ॥८८॥
तब मन्मथ श्रृंगार सरिस प्रभु छबि किमि होई।
प्रभु सम कहै श्रृँगार उचित तेहि कहै न कोई ॥८९॥
यदपि बात यह सत्य तदपि कबि करहिं बखाना।
मन्मथ अरु श्रृंगार सरिस प्रभु कृपा निधाना ॥९०॥
वामे कारन प्रवल कहौं सो मैं समुझाई।
कवि उपमा को एक अँग संकेत बताई ॥९१॥
उपमा पूर्ण न लहै कहै संकेत जनाई।
चन्द्र सु शाखा न्याय विदित जग में प्रगटाई ॥९२॥
तैसेहि प्रभु को काम और श्रृंगार समाना।
कवि जन करहिं बखान हेतु नहिं अपर लखाना ॥९३॥
लसत सिंहासन मध्य कोटिशत मदन मानहर।
सुख सुषमा आगार प्रेमरस सार मोद घर ॥९४॥
चहुँ दिशि चंचल चतुर चखनि चितवहिं चित चोरहिं।
देव कुमारी परम प्रेम पागी रस बोरहिं ॥९५॥

नवल नायका बृन्द भक्ति युत विनय सुनावें।
सूक्षम कटि रस सिन्धु प्राण बल्लभ सुख पावे ॥९६॥
प्रियन प्रेम परतन्त्र प्राण प्रीतम रसिकेश्वर।
पावत परमानन्द रमण रस बस सर्वेश्वर ॥९७॥
कर गहि आदर सहित सखी पिय को हर्षाई।
रास सु मण्डल मध्य सकल प्रमुदित लै आई ॥९८॥
दै गलवाहीं बहुरिं भाव भरि नृत्यन लागीं।
देव कुमारी निकर परम प्रेमामृत पागीं ॥९९॥
अमित रूप धरि रमत रमन मैथिली रसिक वर।
सबहिं देत सुख स्वाद सकलविधि परम मधुर तर ॥१००॥

दो०—सकल सहचरिन ते अधिक, करत मोंहि पिय प्यार।
सब मन यही बिचारहीं, भरी परम उद्गार ॥६॥

सकल नागरिन हृदय भाव यहि भाँति जनाई।
सब सखियन सें अधिक पिया मोहिं देत बड़ाई ॥ १ ॥
प्रीति मोंहि सन करत अधिक औरन से नाहीं।
करि यही भाँति विचार सकल सखियाँ हर्षाहीं ॥ २ ॥
जासु तर्जनी कँपत चराचर जगत डरावै।
निज इच्छा से पलक माहिं ब्रह्माण्ड बनावै ॥ ३ ॥
अमित कोटि ब्रह्माण्ड जासु बल विरचित माया।
जाकी महिमा अनिर्वाच्य कोउ भेद न पाया ॥ ४ ॥
परब्रह्म परमीश सकल अविगत अविकारी।
देवकुमारी प्रणय बिबस यों कहत सुखारी ॥ ५ ॥

हे गन्धर्व किशोर सखिन चितचोर रसिक वर ।
आज खिाइय नृत्य कला निज अद्भुत मुद भर ।। ६ ।।
गान कला संगीत शास्त्र की रीति सुखद वर ।
दिखलाइय अति प्रेम सहित सब बिधि उदार तर ।। ७ ।।
प्रणतारति हर अमल कृपा हम पर रघुनन्दन ।
कीजै हम सब प्रणत चरन वन्दौं रस रंजन ।। ८ ।।
यहि विधि पिय से बदत प्रेम रस सागर माहीं ।
मगन अमित आनन्द लहैं सब हिय हर्षाहीं ।। ९ ।।
बहुरि नृत्य वर गान कला कौशल बिस्तारी ।
वाद्य बिपुल विधि बजत सरस ध्वनि अति मनहारी ।।१०।।
रास रसिक शिरताज राजनन्दन रघुनन्दन ।
सकल सखिन के मध्य नटत परिकर मन रंजन ।।११।।
चहुँ दिशि देव कुमारि सुभग रमणी मनहारी ।
सुन्दर भौंह रसाल मधुर चितवनि सुख कारी ।।१२।।
तिन सबके बिच लसत श्याम सुन्दर नवीन वय ।
निर्मल तेज अपार विमल विधु बदन कियो जय ।।१३।।
परत श्याम प्रतिबिम्ब मणिन खम्भन मधि सोहत ।
मानहु मदन महान अमित तन धरि सखि मोहत ।।१४।।
करगहि प्रेम समेत सखिन अति प्यार घुमावत ।
घूमत तिंन के नयन सैन अतिसय छबिपावत ।।१५।।
दश दिशि दीखत रास रसिक रसिया रघुनन्दन ।
चक्रवर्ति नृप सुवन भुवन भूषन मन रंजन ।।१६।।

सब शिच्छा सम्पन्न परम सुषमा गुण सागर।
दच्छिण नायक मधुर रसामृत सिन्धु उजागर ॥१७॥
रास सुमण्डल मधुर मनोहर सुखद रसाला।
देवसुतनि की अंग कान्ति पूरित छबि जाला ॥१८॥
उनके भूषन बसन बिमल विलसत विशेष कर।
शुभ्र चाँदनी सहित कला पूरण निशेश वर ॥१९॥
तासु कान्ति कमनीय सरस रमनीय निशा अति।
खिली मल्लिका सुमन भार भूषित प्रतिकाशति ॥२०॥
दिशि अरु बिदिशि महान प्रभा छाई सुखदाई।
स्वेत रंग सब लसत ब्योम वर भूमि सुहाई ॥२१॥
याते दीप मसाल आदि विन परम प्रकाशा।
रहत सतत रस एक सखिन मन अधिक हुलाशा ॥२२॥
याते चाँदिनि राति रास रसिकन सुखकारी।
रास रंग रस स्वाद राग वर्धन अति प्यारी ॥२३॥
यदि कोइ कहे कुमार परम सुकुमार सुघर वर।
नृत्य करत श्रम लहत अधिक यद्यपि सनेह घर ॥२४॥
सो मुनि कहत बखानि रास रसिया रघुराई।
रूप अनूप अपार मार मर्दन छबि छाई ॥२५॥
मुक्ताफल मय हार आदि भूषण अँग धारे।
हरि चन्दन तन लेपि लसत जीवन धन प्यारे ॥२६॥
ये सव शीतल बस्तु अंग को अति सुखदाई।
शशि प्रकाश सुचि सुधासरिस श्रम सकल नसाई ॥२७॥

पुनि दोउ दिशि अति भाग्यवती शोभित दो वामा।
लिये ललित वर व्याजन दुलावहिं मन अभिरामा ॥२८॥
शीतल सरस समीर सुगन्धित श्रम हरि लेवै।
याते करतहु रास नेनक श्रम प्रभुहिं न देवै ॥२९॥
पुनः पगे पिय प्रीति परम सखियाँ अनुरागीं।
करहिं गान रस खान प्रेम बस रति रस पागीं ॥३०॥
पिकवैनी स्वर मधुर सरस पिय सुखद सुहावन।
सुनि गुनि परमानन्द लहत प्रीतम मन भावन ॥३१॥
करत गान कमनीय स्वयं अति मधुर रसाला।
सुनि सुनि प्रेम विभोर लखहिं छवि एकटक बाला ॥३२॥
अरस परस करि गान नृत्य रस बस सुख पावत।
उभय समाज सनेह सने तन सुरति भुलावत ॥३३॥
ललित कला संगीत माहिं प्रभु सुरन सु वन्दित।
करत सखिन सँग रास रंग क्रीड़ा मन प्रमुदित ॥३४॥
उर नव नव उत्साह उठत सबके रस बस अति।
नव नागर नायिका रमावत रमत सरस मति ॥३५॥
देवकुमारी सकल विरंचि मण्डल मन हारी।
लसहिं अलात सु चक्र सदृश प्रीतम मुदकारी ॥३६॥
चार हाथ महि छोंड़ि ब्योम में नटहिं नागरी।
पारावत गति भंग करसिं रति रस उजागरी ॥३७॥
गान तान बन्धान ताल स्वर ग्राम मनोहर।
करहिं कामिनी काम कला कौतुक उमंग भर ॥३८॥

उनकी कला कलाप सरस मन हर सुखदाई ।
नृत्य गान संगीत मधुर ध्वनि रति रस छाई ।।३९।।
लखि चितचोर किशोर चपल चख चितय मोद भर ।
निज कर कंज कपोल परसि रस बस नायक वर ।।४०।।
एक बाहु धरि कण्ठ एक से परसि चिवुक सुठि
निरखत मुख माधुरी प्राण प्रीतम प्रवीन उठि ।।४१।।
अमल कपोलन चमि सहज सुचि सहस सुधामय ।
चखत अधर रस रसिक कृपा सागर सुशील नय ।।४२।।
कोटि सुधा से सरस सुखद निज अधर सुधा रस ।
सखिन करायो पान प्रेम पूरित सनेह बस ।।४३।।
निज कर कोमल कठिन कुचन मर्दन करि रघुवर ।
लसत हँसत सुख स्वाद देत सब को उमंग भर ।।४४।।
यद्यपि श्रीपति सदृश लसत गुण खानि रसिक वर ।
एक रूप अभिराम राम सुखधाम मोदघर ।।४५।।
तदपि देव कन्यकनि साथ बिलसत बहु रूहा ।
सकल सखिन सँग रमत रमावत अमल अनूपा ।।४६।।
प्रति सखि साथ सनेह सने सुख स्वाद करावहिं ।
करहिं तासु रस स्वाद हर्षि वाको हर्षावहिं ।।४७।।
वाम भाग में सखिन लिये रस निधि रघुराई ।
लसत दाहिने भाग स्वयं सखियन सुखदाई ।।४८।।
सब की रुचि अनुसार रास रसिया रस भीने ।
करहिं केलि कमनीय कामिनिन निज बस कीने ।।४९।।

जस जस वे सब कहहिं करहिं तस तस रघुनन्दन ।
मन बानी गोतीत प्रेम बस रतिरस रंजन ॥५०॥
अनुभव गम्य परेश प्रेम पूरक प्रकाश कर ।
ब्रह्म सच्चिदानन्द कन्द रघुवर प्रमोद घर ॥५१॥
वेद चक्षु से दर्शनीय सब भाँति अमल अति ।
अज अनवद्य अनन्त सतत निरखत निर्मल मति ॥५२॥
देव कुमारिन संग सोइ सुख सागर नागर ।
रमि रमाय सुख लेत देत नटवर छवि सागर ॥५३॥
पुनः रसिक रघुवीर रास मण्डल बिच सोहत ।
निकर कामिनी गान तान से पिय मन मोहत ॥५४॥
सो संगीत रसाल मधुर प्रिय सुखद सुहावन ।
अति अनुपम मन रमण रास लम्पट मन भावन ॥५५॥
वाकी ध्वनि भरि पूरि रही दश दिशनि सुहाई ।
प्रति ध्वनि आई लौटि सखिन आनन्द डुबाई ॥५६॥
अतिसय प्रिय सो शब्द दिशा मानों चलि आईं ।
चाहहिं अति आनन्द प्रवल उत्साह दिखाई ॥५७॥
रासमण्डली गान तान प्रति ध्वनि के ब्याजा ।
नृपकुमार यश रूप माधुरी वरणन काजा ॥५८॥
आईं ये सब दिशा परम प्रेमामृत पागीं ।
चक्रवर्ति नृप तनय सु कीरति गावन लागीं ॥६९॥
देवकुमारिन बिरचि व्योम गन्धर्व नगर वर ।
तामधि ललित तड़ाग बाग अतिसय अद्भुत तर ॥६०॥

वा पुर में अतिश्रेष्ठ मधुर स्वर सुखद सुहावन।
भेरि आदि बहु वाद्य बजहिं राघव मन भावन ॥६१॥
पुनि सुर सरित सदृश्य स्वेत सुचि स्वच्छ सुभगतर।
मधुर मयंक सु किरण पुंज सम देव वृन्द वर ॥६२॥
तिनके पुष्प समूह झरत जनु बर्षत पानी।
अति सौरभ सम्पन्न सरस सुन्दर सुखदानी ॥६३॥
भू अकाश तक एक सरिस नहिं भेद दिखावै।
रास स्थल भो स्वेत छटा अनुपम छहरावै ॥६४॥
श्री महराजकुमार अमर कन्यन के संगा।
क्रीड़ा करत सनेह सहित रँगि मन्मथ रंगा ॥६५॥
यद्यपि प्रभु अज अमल अनघ मनवद्य अकामा।
अति अनीह आशक्ति रहित सुन्दर सुख धामा ॥६६॥
कोटि कोटि कन्दर्प दर्प जेहि निरखि भुलावै।
कहिये कारण कौन वाहि भी काम सतावै ॥६७॥
प्रीतम प्राण अधार प्रणत प्रति पालन हारे।
सन्तत सज्जन सुखद श्याम सुन्दर सुकुमारे ॥६८॥
याही से रसिकेश सखिन सँग रमत रमावत।
"सीताशरण" सनेह सरस साने सुख छावत ॥६९॥
सुन्दर सुमन समूह मध्य कबहूँ रसिकेश्वर।
गिरत उठत पुनि गिरत परत प्रमुदित अखिलेश्वर ॥७०॥
निज इच्छा से करत केलि कौतुक मनहारी।
सखिन सहित रस रास पगे परिकर सुखकारी ॥७१॥

गिरत व्योम से सुमन हर्षि करमें लै रघुवर ।
हँसत हँसावत सखिन प्रेम रस रूप सु छबिधर ।।७२।।
सुमन सदा प्रिय प्रभुहिं जगत सब जानत अहई ।
याते इनमें रमत सखिन युत श्री रघुराई ।।७३।।
क्वापिनायिका नवल देव कन्या सुकुमारी ।
निज अँग लियो छिपाय सुमन के ढेर मझारी ।।७४।।
चतुर शिरोमणि श्याम सरस अभिराम मोद घर ।
सुमन सु तकिया जानि लगायो वाहि पृष्टि तर ।।७५।।
पुनि वाकी रुचि जानि मृदुल अँग नटवर नायक ।
परिरम्भण करि अंग संग दीनो सब लायक ।।७६।।
यहि लीला से पृथक रहीं कुछ देव कुमारी ।
उनने पियहिं विलोकि कियो अचरज मन भारी ।।७७।।
विना सूत्र के सुमन हार प्रीतम गल जोहे ।
तैसेहिं कुछ सुर सुतनि कण्ठ मधिमाला सोहे ।।७८।।
ते चित चकित विचार तर्क निज मन में लावैं ।
बिना सूत्र किमि सुमन रुकें पर जानि न पावैं ।।७९।।
यहि बिधि कौतुक मगन गईं सब जहाँ रसिक वर ।
प्रीतम प्रीति प्रकाश करन हारे प्रमोद घर ।।८०।।
यद्यपि सब सुर सुता परम सुभगा सुकुमारी ।
रमणीया सब भाँति प्राण वल्लभ मनहारी ।।८१।।
यद्यपि उनके साथ करत प्रभु विविधि बिनोदा ।
वे श्रम खेद न लहहिं लहहिं हिय परम प्रमोदा ।।८२।।

नव लीला सम्पन्न रास लीला रुचिकारी।
मधुर मनोहर सरस सुखद अति आनँद कारी ॥८३॥
पुनि पिय प्रिय संयोग नवल अति अमल अनूपम।
याते सखी समाज सकल पिय रुचि अनुरूपम ॥८४॥
लीला करहिं सनेह सहित श्रम खेद न मानै।
प्रीतम प्राण अधार सबहिं अतिसय सनमानै ॥८५॥
याते नव आनन्द हृदय सब के लहराई।
प्रेम सदन सब सखीं प्रीतिरस हिय उमगाई ॥८६॥
कोई तृप्ति न लहैं विनय बिधि से सब करहीं।
"सीताशारण" न होय निशागत अस मनभरहीं ॥८७॥
हम सब पिय के संग मुदित मन यही प्रकारा।
अनुभव करती रहें प्रेम सुख स्वाद अपारा ॥८८॥
लखेउ रसिक शिरमौर परम प्रिय देव कुमारीं।
अपनो वर बिधु बदन प्रेम से रहीं निहारीं ॥८९॥
निजनाशा मणिमध्य मधुर मुक्ता मणि मण्डित।
निरखहिं सब भामिनी भाव भरि रति रस पण्डित ॥९०॥
कोटि चन्द्र से अधिक प्यार पिय मुख बिधु माहीं।
व्योम उदय वर विमल चन्द्र की इच्छा नाहीं ॥९१॥
तेहि क्षण सखियन अंग अमल अनुपम दर्शावैं।
उड़ै सुगन्ध समूह सरस अचरज सब पावैं ॥९२॥
यह सुगन्ध किस फूल केर मम अंगन माहीं।
आयरही अति सुखद अस्तु हम जानत नाहीं ॥९३॥

याते अपर सुगन्ध केर इच्छा नहिं करहीं ।
कामिनि काम प्रकाश करहिं अति आनँद भरहीं ॥९४॥
कारण यह सब रसिक राज रघुवर प्रिय बामा ।
यातेस्वतः समस्त भोग पावहिं निष्कामा ॥९५॥
इन सब के प्रिय प्राण नाथ रस सिन्धु सुघर वर ।
सुख सुषमा आगार प्रेम पूरित उदार तर ।।९६॥
अरस परस आनन्द बृद्धि हित सकल नागरी ।
घड़ी घड़ी नव नव श्रृंगार बदलहिं उजागरी ॥९७॥
तिनहिं देन सुख स्वाद हेत रसिकेश सुघर वर ।
क्षण क्षण नव श्रृंगार सजहिं अनुपम सु भव्य तर ॥९८॥
एकहिं एक सुख स्वाद देन हित नव श्रृंगारा ।
निज सुखार्थ नहिं सजहिं सुमन मालादि अपारा ॥९९॥
जो सखि निज सुख स्वाद हेत श्रृंगार सजावैं ।
तो प्रसाद हो जाय प्राण धन किमि सुख पावैं ॥१००॥

दो०–जब तक चेतन हृदय में, राखत निज सुख गन्ध ।
तब तक "सीताशरण" नहिं, प्रभु से दृढ़ सम्बन्ध ॥७॥

याते निज सुख गन्ध नहीं सखियन के मन में ।
प्रीतम सुखहित सजहिं नवल भषण सब तन में ॥ १ ॥
जौलों निज सुख स्वार्थ गन्ध चेतन चित धारे ।
तौलों न हैं हिय रमहिं रसिक वर राजदुलारे ॥ २ ॥
जब किंचित सुख स्वार्थ गन्ध मन में नहिं आवै ।
"सीताशरण" सुजान सजन सँग सब सुख पावै ॥ ३ ॥

प्रीतम सुख लगि सजै नवल अंगन श्रृंगारा ।
मम तन प्रिय को भोग्य हृदय अस करै विचारा ॥ ४ ॥
तो अवश्य करुणेश कृपा सागर रघुवन्दन ।
देहिं परम सुख स्वाद करहिं क्रीड़ा रस रंजन ॥ ५ ॥
येही सब गुनिहृदय देव तनयनि सुख सारे ।
दीने पिय को अर्पि स्व सुख पिय कृपा अधारे ॥ ६ ॥
याते चेतन सावधान हो यावत भोगा ।
प्रभु के अर्पण करै लगावै अस संयोगा ॥ ७ ॥
निज सुख की बासना न किंचित आवन पावै ।
प्रीतम सुख हित विविधि भाँति निज अंग सजावै ॥ ८ ॥
भोग्य पदारथ अपर करै अर्पण सुखपाई ।
"सीताशरण" सुजान स्वामि को लेइ रिझाई ॥ ९ ॥
अतिसय प्रेमाबेश यदपि सब देव कुमारीं ।
सावधान चित तदपि पिया पर तन मन वारीं ॥१०॥
निज तन मन सुख सकल प्राण प्रीतम के मानहिं ।
तत्सुख सुखी सदैव स्वसुख प्रभु सेवा जानहिं ॥११॥
यद्यपि सकल सुगन्ध युक्त मुख मधुर अधर वर ।
नव पल्लव अनुसार रूप गुन रासि सुभग तर ॥१२॥
प्रीतम बदन सरोज गन्ध की तदपि उपासी ।
मुख में मुखहिं मिलाय लहैं सुचि गन्ध बिलासी ॥१३॥
कबहुँ,कबहुँ अति व्यथित होयं मन्मथ सु वाण लगि ।
पकरहिं पियके युगल कमल कर अति सनेह पगि ॥१४॥

अति विह्वलता बिबस लाज संकोच बिहाई।
प्राण नाथ को हर्षि लेहिं निज हृदय लगाई ॥१५॥
अपनो अति सौभाग्य जानि अति आनँद पावै।
प्रीतम प्रीति प्रतीत पगे हँसि हृदय लगावै ॥१६॥
यद्यपि वे अति काम बिबस नख सिख सुकुमारी।
प्रीतम रूप उदार सिन्धु माधुर्य बिहारी ॥१७॥
स्थिर सुरति अनन्त अमित सुख स्वाद प्रदायक।
प्रीतम प्राण अधार सखिन रस बस सब लायक ॥१८॥
विरज अनघ अनवद्य निखिल गुन सागर नागर।
रघुनन्दन चितचोर प्रेमरस बोर मोद घर ॥१९॥
मृदु हँसि प्रेम समेत सरस चितवनि जब डारी।
मैथुन इच्छा प्रवल सखिन की सकल निवारी ॥२०॥
जासु ध्यान कर स्वजन स्ववश करि लेत बिकारा।
जाको पावन नाम विमल श्रुति विदित उदारा ॥२१॥
कायर कुटिल कलंक सहित अति क्रूर कुकर्मी।
कामी परम कुचाल अपर सब भाँति अधर्मी ॥२२॥
सोउ जपि जाको नाम होत जग विदित पवित्रा।
नाशत सकल बिकार जासु यश विमल विचित्रा ॥२३॥
सोइ रघुवीर सुजान तिनहिं किमि काम सतावै।
परत दृष्टि मन हरन काम कामना नशावै ॥२४॥
वाहू पर सब देव सुता रघुवर प्रिय वामा।
प्रीतम मन सब करन परम रमणीय ललामा ॥२५॥

यदि कोइ कहे जनेशतनय श्री राम कुमारा।
तिनहिं न वाधित काम करत आश्चर्य अपारा ॥२६॥
वाकी शंका समाधान यहि विधि अब सुनिये।
सावधान करि बुद्धि सतत मन मानस गुनिये ॥२७॥
परब्रह्म परमीश परम गति घट घट बासी।
व्यापक ब्याथ विभूति वेद विद अज अविनासी ॥२८॥
अज अनन्त अखिलेश अमल अनवद्य अनामय।
अनघ अकाम अनीह अमित गुन गन करुणामय ॥२९॥
निज इच्छा तनधारि भक्त हित लीला करहीं।
प्रेमबिबस हो देव सुतनि उर आनँद भरहीं ॥३०॥
यद्यपि रस बस करत केलि मानव अनुहारी।
तदपि सतत रस एक रहत श्री अवध विहारी ॥३१॥
ब्रह्म जहाँ भी जाय वाहि ऐश्वर्य न त्यागत।
यथा पुरुष प्रतिबिम्ब वाहि के पीछे लागत ॥३२॥
करै कोटि किन यत्न विम्बतजि पुरुष न जावै।
अथवा जिमि शशि भानु किरन वहि माहिं समावै ॥३३॥
तिमि ऐश्वर्य कदापि ब्रह्म तजि अनत न जाई।
वाकी इच्छा माहिं छिपे पर नाँहि पराई ॥३४॥
शीतलता जिमि नीर अग्नि ऊषणता भारी।
जिमि कुसंग अज्ञान सन्त सँग आनँद कारी ॥३५॥
रवि शशि साथ प्रकाश रहे तजि अनत न जावै।
तिमि ऐश्वर्य महान ब्रह्म अँग में लपटावै ॥३६॥

प्राकृत मानव तिनहिं काम अतिसय दुख कारी।
ब्रह्म सच्चिदानन्द कन्द रस रास विहारी ॥३७॥
त्रिगुणातीत विशुद्धसत्वगुण मय तन धारी।
देही देह विभाग रहित एक रस अविकारी ॥३८॥
निर्बिशेश निर्लेप दोष गुण रहित अमल अति।
अवधनृपति सुत मानि निजहिं मानत वनितन रति ॥३९॥
चक्रवर्ति नृप तनय अहौं मैं अस अभिमाना।
मानि तिनय सँग रमत रमावत परम सुजाना ॥४०॥
प्राकृत नर इव करत सदा सब विधि व्यवहारा।
भक्तन सुख हित करत अमित लीला बिस्तारा ॥४१॥
आप स्वयं सुखरूप अन्य से चाहत नाहीं।
सखिन देनहित स्वाद प्रेम रस रमि हर्षाहीं ॥४२॥
अघटित घटना पटीयशी तेहि हेतु उपाधी।
अमित तिनय सँग रमत रमाबत सदा अबाधी ॥४३॥
यहू जनावत सतत अहौं मैं ब्रह्म अनादी।
नर स्वरूप भुज युगल लखहिं परमारथ वादी ॥४४॥
अब श्री सूत सुजान कहत सब देव कुमारी।
रघुनन्दन पर देह प्राण तन मन सब वारी ॥४५॥
मनमें करैं विचार अंग हम सब के सारे।
रहहिं सदा पिय साथ न चाहहिं आनसहारे ॥४६॥
प्रभु सेवा में लगै अन्य या अपनी नाहीं।
दासी रहित उपाधि होयं निश्चय मन माहीं ॥४७॥

करि प्रभु को सुचि अंग संग भईं विगत बिकारा ।
पायो परमानन्द हृदय में हर्ष अपारा ॥४८॥
सचराचर जग माहिं जीव जेते हैं भाई ।
भोग्य भूत सब ब्रह्म केर सेवक सुखदाई ॥४६॥
निज स्वारथ तजि करै सतत प्रभु की सेवकाई ।
निरुपाधिक दासता वही ऋषि मुनिन बताई ॥५०॥
इन सब ने सुख सकल आपने प्रभु पर वारे ।
प्रभु सेवा सब भाँति स्वसुख मन माहिं विचारे ॥५१॥
जैसे पिय छबि निरखि महाँ सुख सिन्धु समावैं ।
किंचित होत वियोग तथा हिय से दुख पावैं ॥५२॥
प्रभु तजि चिंतन अन्यकेर एकहु त्तण आवै ।
बिष समान कटु जानि वाहि तजि पिय छबि ध्यावै ॥५३॥
सरसरास रस जानि सुरत मुख अल्प बिचारी ।
रूप माधुरी पान बिघ्न गुनि त्यागि सुखारी ॥५४॥
सुरत महाँ सुख बिबस नहीं ये सब सुकुमारी ।
पिय सुख हित भरि भाव करहिं क्रीड़ा मन हारी ॥५५॥
स्वल्प न अपने लिये स्वसुख सब बिधि से त्यागी ।
भली भाँति पिय पाद पद्म सेवहिं अनुरागी ॥५६॥
यदि कोइ कहे कि राघवेन्द्र सुख सुरत अधीना ।
तो वाही की भूल बदहिं यहि भाँति प्रवीना ॥५७॥
विश्व बिमोहन रति मनोज जाके बस रहहीं ।
सो सब विधि स्वच्छन्द एक रस चहुँ श्रुति कहहीं ॥५८॥

सुख आनन्द समुद्र शील सुचि सरल गुणाकर ।
करहि नहीं विच्छेद सुरत सुख प्रभु इच्छापर ॥५९॥
परब्रह्म स्वच्छन्द तासु सुख निज आधीना ।
अन्याश्रित सब भाँति उपाधी रहित नवीना ॥६०॥
महाँ रास रस लीन रसिक वर रास विहारी ।
निज हिय कीन विचार सुरत सुख स्थिर भारी ॥६१॥
परस्थिर सुख सुरत एक कामिनि सुख कारी ।
रास मध्य नायिका अमित सब परम पियारी ॥६२॥
एकहिं लखि एक करहिं कलह आपस में भारी ।
रास मध्य सुख सकल लहहिं सम यावत नारी ॥६३॥
दक्षिण नायक प्रवर राम रघुवंश प्रभाकर ।
कोमल सरस स्वभाव प्रेम पूरक उदार तर ॥६४॥
कौन करावे कलह नायिकन आपस माहीं ।
यहि बिचारि करि रास रंग सब सँग हर्षाहीं ॥६५॥
शंका प्रथमहिं करी सूत पुनि सावधान करि ।
आगे अपर चरित्र कहत सुनिये उमंग भरि ॥६६॥
दिवस माहिं सुर सुता लतावनि रहे सुहावनि ।
रैन नवल नायिका होयं रघुवर मन भावनि ॥६७॥
करहिं केलि कमनीय प्राण प्रियतहिं रमावहिं ।
रमहिं आप पिय संग सुखी करि तिनहिं रिझावहिं ॥६८॥
रास रसिक शिरमौर सकल वनितन सँग माहीं ।
रमिरमाय सुख देहिं लेहिं निज हिय हर्षाहीं ॥६९॥

अब श्री सूत सुजान विनय रघुवर से करहीं।
निज उर में भावना परम उत्तम बिधि भरहीं ॥७०॥
देव कुमारिन अंग संग अलिंगन चुम्बन।
रमे रमाये करि बिहार आनन्द मोद घन ॥७१॥
उनकी क्रिया कलाप निरखि अति आनन्द पाये।
दम्भरहित शिव सतत जिनहिं पूजत सुख छाये ॥७२॥
महाँ माधुरी मगन मधुर माधुर्य सिन्धु वर।
आनँद उदधि अपार रूप गुन शील सरस तर ॥७३॥
दायक सहज स्वरूप भूपमणि मुकुट सुवर वर।
नख मणि चन्द्र प्रकाश प्रीति वर्धक सनेह घर ॥७४॥
प्रभु पद पंकज पगी परी जहँ ललित धूल बर।
सो पावन थल सुखद परम रसमय प्रमोद घर ॥७५॥
तहँ देवें मोहिं प्रीति प्राण प्रीतम रघुराई।
देवकुमारिन संग जहाँ रस रास कराई ॥७६॥
दियो सबहिं सुख स्वाद आप अतिसय सुख पायो।
रमि रमाय हर्षाय तिनहिं सब बिधि हर्षायो ॥७७॥
तेहिथल पावन प्रीति मोहिं दीजै रघुनन्दन।
हम नित देखैं तहा सतत क्रीड़ा मनरंजन ॥७८॥
यह रहस्य सुख सदन मदन मद मान नसावन।
परिकर प्राणाधार परमपावन तम पावन ॥७९॥
निज मति गति अनुसार कृपा निधि गाय सुनायो।
यदपि न कवित विवेक तदपि नाथहि बल गायो ॥८०॥

भई त्रुटी बहु भाँति बने अपराध अपारा ।
क्षमिये क्षमा निधान दयानिधि परम उदारा ॥८१॥
जयति जयति सुर सुतनि संग सुख पावन हारे ।
जयति जयति रमणीय राजनन्दन सुकुमारे ॥८२॥
जय जय प्राण अधार परम रस रास विहारी ।
जय जय परम उदार सतत परिकर मुदकारी ॥८३॥
जयति जयति रस प्रेम रूप सागर विनोद जय ।
जयति जयति रति रमन सखिन दायक प्रमोद जय ॥८३॥
जय जय परिकर प्रेम पगे रति रस निवास जय ।
जय जय स्वजन सनेह सने सुचि सुख विशाल जय ॥८४॥
जयति ययति प्रणतार्ति हरन सुखकन्द नेह घर ।
जयति जयति उर प्यार भरन रघुनन्द रसिक वर ॥८५॥
जय जय "सीताशरण" सरस सब भाँति सुखद जय ।
जय जय सरल स्वभाव सहज सुकुमार सुपद जय ॥८६॥
जयति जयति मन हरन मधुर मूरति उदार जय ।
जय जय "सीताशरण" सुहृद सुठि हृदय हरन जय ॥८८॥

दो०-जय आनन्द सनेह निधि, जय जय परम उदार ।
जय जय रसिक नरेश जय, सीताशरण अधार ॥१॥

इति श्री युगल रहस्य माधुरी विलाशे, श्रीराम रासे सीताशरण सुमति प्रकाशे, देवकन्या रास प्रकरणम् वरणम् नाम तृतीयोऽध्यायः सन्पूर्णमस्तु ।